पुरस्कार।

हिन्दुओं की काल-गणना के हिसाब से, वर्त्तमान युग का नाम कलियुग है। इस युग के अन्त में, जब संसार में पाप का प्रसार बढ़ कर, अधर्म धर्म्म का सर्व-ग्रास कर लेगा, तब भगवान् कल्किरूप धारण कर, इस धराधाम पर अवतरेंगे। यह पुराण उन्हीं कल्कि भगवान् की कथाओं का संग्रह है। इस लिये हम अपने हिन्दी पढ़ने वाले बालक बालिकाओं को यह पुस्तक सस्नेह पुरस्कार स्वरूप देते हैं।

चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्म्मा।

भूमिका ।

" बालकोपयोगी पुस्तकमाला " का यह अट्ठारहवाँ अङ्क है । "कल्कि-पुराण" अष्टादश अथवा उपअष्टादश पुराणों के अन्तर्गत नहीं जान पड़ता । तब हाँ, हमने इसे इस लिये प्रामाणिक मान लिया है कि " हिन्दुओं की विराटधर्म सभा श्रीभारतधर्ममहामण्डल " की पुराणमाला में इस पुराण को प्रथम स्थान दिया गया है और उक्त संस्था ने "कल्कि-पुराण" का भाषानुवाद सहित एक संस्करण प्रकाश किया है ।

भगवान् के मूल दशावतारों में कल्कि अवतार सब से अन्तिम हैं और जिस समय कलि के अन्त में धर्म्म लुप्तप्राय हो जाता है, उस समय इस अवतार का प्रादुर्भाव होता है ।

पुराण-प्रणेता त्रिकालदर्शी थे, और भगवान् के अवतार प्रत्येक कल्प में हुआ ही करते हैं, सो उसीके आधार पर यदि यह ग्रन्थ भी रचा गया हो, तो आश्चर्य नहीं ।

इस ग्रन्थ में पढ़ने वालों का मनोरञ्जन भी होता है और शिक्षा के साथ साथ भगवान् का पापनाशी नामोच्चारण भी अनेक बार करना पड़ता है । इस लिये, चाहे यह ग्रन्थ प्रामाणिक हो, या आधुनिक कवि-कल्पना प्रसूत, हम अनेक निकम्मे उपन्यासों की अपेक्षा इसे अच्छा समझते हैं । क्योंकि इसमें भगवान् विष्णु का पुनीत चरित्र है ।

" पुस्तकमाला " का यह अट्ठारहवाँ अङ्क है, इस लिये इसकी भाषा अन्य पुस्तकों की अपेक्षा कुछ क्लिष्ट है ।

प्रयाग;
फा० शु० १३ सं १९६७. } चतुर्वेदी द्वारका प्रसाद शर्मा.

विषय--सूची।

प्रथम अंश।

द्वितीय अंश।

तृतीय अंश।

संक्षिप्त-कल्कि-पुराण

प्रथम-अंश।

१-कलि-आगमन

ए क बार पुण्य क्षेत्र में बैठे महर्षि सूत जी भगवान् श्री विष्णु की स्तुति करते करते बोले:—

सूतजी—इन्द्र सहित देवता गण, सब महर्षि गण, और सारे लोक-पाल गण, अपने कार्य के निर्विघ्न समाप्त होने के लिये, जिनकी सर्वदा पूजा किया करते हैं; प्राचीन काल में जिनका यश अनेक वैदिक तन्त्रों और शास्त्रों में गाया गया है, उन सर्वज्ञ, सर्वाधार, विघ्नों के नाश करने वाले, अनन्त, अच्युत और अजन्मा श्री विष्णु भगवान् की मैं वन्दना करता हूँ। जिनके भुजा रूपी सर्प से पृथ्वी के अत्याचारी राजा नष्ट

होंगे, जिनकी भयङ्कर तलवार से अत्याचारियों का नाश होगा, जो सिन्धु देश के सुन्दर घोड़े पर सवार होंगे, जो ब्राह्मण के यहाँ उत्पन्न होंगे, और जो संसार में फिर से सत्य-युग प्रचलित करेंगे, वे कल्कि भगवान् हमारी रक्षा करें।

त्रिकालज्ञ महर्षि सूत जी के ऐसे वचन सुन, नैमिषारण्य-वासी शौनकादि ऋषिवर्ग उनसे बोलेः—

ऋषिवर्ग–हे महर्षि सूत ! आप भूत भविष्यत् और वर्त्तमान की सब बातों को जानते हैं। आप कृपया हमसे श्री भगवान् की कथा कहें, कलि कौन है ? उसने कहाँ जन्म लिया, उसने पृथ्वी पर क्या क्या कार्य किये और उस कलि ने किस प्रकार सनातनधर्म का नाश कर, संसार में पाप फैला दिया ? ये सब बातें आप हमसे कृपा पूर्वक कहें।

ऋषियों के ऐसे विनीति वचन सुन, महर्षि सूत जी ने भगवान् विष्णु का ध्यान किया और श्रोताओं को सम्बोधन कर के बोलेः–

श्री सूत जी–यह होने वाली विचित्र कथा जो मैं अभी आपसे कहूँगा पहिले पहिल श्री ब्रह्मा जी ने देवर्षि नारद जी से कही थी। नारद जी ने यह कथा श्री वेद व्यास जी से कही। वेद व्यास जी ने यह ब्रह्मरात जी को सुनायी। यही कथा उन्होंने १८००० श्लोकों में विष्णुरात जी से कही थी। मार्कण्डेय आदि महर्षियों ने इस कथा को श्री शुकदेव जी से सुना था। वही होने वाली घटनाओं की कथा; जैसी मैंने श्री

शुकदेव जी से सुनी है वैसी आप लोगों से कहता हूँ।

आनन्द कन्द श्री कृष्णचन्द्र जी के वैकुण्ठ चले जाने पर जैसे कलि की उत्पत्ति हुई, उसे मैं आपसे कहता हूँ। ब्रह्मा जी ने प्रलय काल बीतने पर अपनी पीठ से पाप को उत्पन्न किया। उस पाप को ज्ञानी लोगों ने अधर्म्म नाम से पुकारा। अधर्म की स्त्री का नाम मिथ्या [झूठ] था। उसकी आँखें बिल्ली की आँखों के समान थीं और वह मनुष्य को अति शीघ्र अपने वस में कर लेती थी। अधर्म और मिथ्या के दम्भ नामक पुत्र और माया नामक कन्या उत्पन्न हुई, दम्भ ने माया के साथ विवाह किया और इनके लोभ नामक पुत्र और निकृति नामक कन्या उत्पन्न हुई। फिर इन दोनों के क्रोध नामक पुत्र और हिंसा नामक एक कन्या उत्पन्न हुई। इन्हीं दोनों से कलि का जन्म हुआ।

कलि का रङ्ग बड़ा काला था। इन मैले कुचैले, भयानक काले महाराज का वास जुआ, शराब, स्त्री और सोने [सुवर्ण] में हुआ। इन्होंने अपनी बहिन दुरुक्ति से विवाह किया; जिससे इनके भय नामक पुत्र और मृत्यु नामक कन्या पैदा हुई। इन दोनों के नरक नामक पुत्र और यातना नामक कन्या हुई। जिनसे हज़ारों पुत्र पैदा हुए और इस तरह कलि महाराज का वंश दिन दूना और रात चौगुना बढ़ने लगा।

ये सब धर्म निन्दक हुए। ये सब आधि, व्याधि, जरा [बुढ़ाई] ग्लानि [घृणा], दुःख, शोक और भय का स्वरूप घर-यज्ञ, वेद-पाठ, दान आदि धर्म कार्य और वेद, आदि धर्म-शास्त्रों के नाशक हुए।

असंख्य प्राणी चलायमान, क्षणभङ्गुर, [पल में नाश होने वाले] कामी मनुष्य का शरीर धारण कर, कलि महाराज के

पीछे चले। ब्राह्मण लोग दुराचारी, अभिमानी, गुरु-निन्दक, माता पिता की हत्या करने वाले हो कर, वेद, शास्त्र से विमुख हुए और शूद्रों की सेवा करने लगे। लोग धर्म, वेद, रस, मांस वेचने वाले, इन्द्रिय-लोलुप, संस्कार-हीन, कुतर्क-वादी, उन्मत्त, और दूसरे की स्त्रियों को खोटी निगाह से देखने वाले हुए। उनका आकार [क़द] छोटा होने लगा, वे पापी हो गये; वे शठ, मठों में रहने वाले, थोड़ी उमर पाने वाले, स्त्रियों में आसक्त और नीचों की सङ्गति करने वाले हुए।

वे ब्राह्मण जो लड़ाई झगड़ा करने में चतुर हुए, जो अपने शरीर की सजावट में लगे रहने लगे, जो धनी हुए और जो सूद [व्याज] खाने लगे, वे ही पूजे जाने लगे। संन्यासी गृहस्थ धर्म में आसक्त हुए, गृहस्थ दुर्बल और विवेचना-हीन हुए, सब लोग गुरु और बड़ों की निन्दा करने लगे और धार्मिक साधुओं का मान न रह गया। शूद्र दान लेने और दूसरों का धन हड़पने लगे। स्त्री पुरुष की सम्मति ही विवाह हुई। न्यायकर्त्ता लोग दण्ड देने में असमर्थ हुए। लोग दुर्बल से घृणा करने लगे। बहुत बकबक करने वाले पण्डित हुए, लोग यश की प्राप्ति के लिये धर्म प्रचार करने लगे, धनी पुरुष साधु हुए, दूर देश का जल ही तीर्थ हुआ, जनेऊ ही में ब्राह्मणपना रह गया, दण्ड ही संन्यासी का चिन्ह रह गया, पृथ्वी में थोड़ा अन्न होने लगा, नदियों में पानी घट गया, स्त्रियाँ खोटी हो गयीं, उनका पति से प्रेम छूट गया, ब्राह्मण चाण्डाल के यहाँ भीख माँगने लगे, स्त्रियाँ स्वच्छन्द हुईं, बादलों ने कम पानी वरसाना आरम्भ किया, प्रजा कर के बोझ से दब गयी, वह अपने बालबच्चों को ले जँगलों में चली गयी और लोग केवल शहद, माँस, फल खा कर, जीने लगे। लोग श्री कृष्णचन्द्र की निन्दा करने लगे। यह

हाल कलि के प्रथम चरण का हुआ ।

कलि के दूसरे चरण में लोग श्री कृष्ण का नाम भी लेना भूल गये. तीसरे चरण में वर्णसङ्करों [दोग़लों] की उत्पत्ति हुई और कलि के चौथे चरण में मनुष्य जातियाँ एक हो गयीं । इस समय लोग ईश्वर ही को भूल गये ।

वेदपाठ, स्वधा, स्वाहा, वषट्, ओंकारादि का नाश होजाने से, सारे देवता गण व्याकुल हो ब्रह्मा जी के पास गये । उन्होंने अपने आगे गऊ-रूपी पृथ्वी को रखा । ब्रह्मलोक में उन्होंने देखा कि वहाँ हर जगह वेद-गान हो रहा है । उन्होंने देखा कि यज्ञ के धुआँ से वायु भरी हुई है, महर्षिगण सोने की वेदी पर यज्ञ कर रहे हैं । बगीचों में नाना प्रकार के पुष्प लगे हैं । पेड़ों की डालियाँ फलों के बोझ से झुक गयी हैं । हवा धीरे धीरे सुगन्धित फ़ूलों की झाड़ियों में हो कर, बह रही है । सरोवरों में कमल खिले हैं, उनके चारों ओर भौंरे गूञ्ज रहे हैं । पानी के किनारे बैठे हुए सारस हँस, मानो मधुर स्वर से राहगीरों का स्वागत कर रहे हैं ।

शोक से व्याकुल देवता गण, अपने स्वामी इन्द्र को साथ ले कर, ब्रह्मा के लोक में, अपने दुःखों को सुनाने के लिये पहुँचे । वहाँ पहुँच कर, सब देवताओं ने ब्रह्मा जी को प्रणाम किया ।

२—कल्कि-जन्म ।
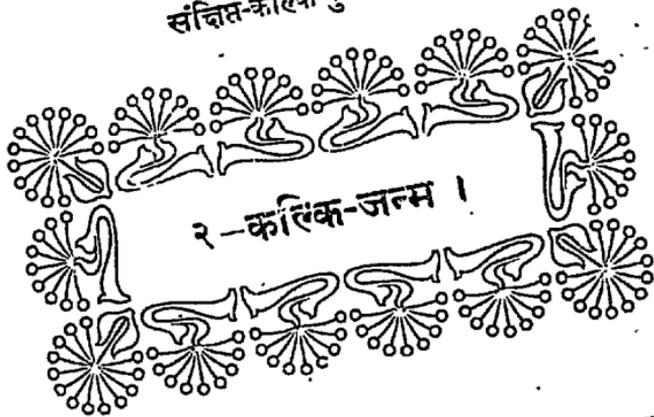
सूत जी कहने लगेः—

ब्रह्मभवन में प्रवेश कर, देवता गण, ब्रह्मा जी की आज्ञा पा कर, उनके सामने बैठ गये, वहाँ उन्होंने बड़े कातर वचनों में ब्रह्मा जी से ...लि के उपद्रव और अपनी विपत्ति का हाल कहा. ब्रह्मा जी ...की बातें सुन कर बोलेः—

... जी—चलो हम लोग भगवान् विष्णु के पास चल कर, प्रार्थना करें, क्योंकि उनकी ही दया से तुम्हारे सब कष्ट दूर होंगे ।

... कह कर, ब्रह्मा जी देवताओं को साथ ले वैकुण्ठ की ओर चले, वहाँ पहुँच कर उन्होंने भगवान् विष्णु से देवताओं की विपत्ति कही और उनसे सहायता माँगी। यह सुन भगवान् विष्णु बोलेः—

भगवान् विष्णु—हे ब्रह्मा ! कलि का नाश करने के लिये हम सम्भल नगर में विष्णु-यश की सुमति नामक कन्या के गर्भ से पृथ्वी पर अवतार लेंगे. फिर से सत्य-युग

को वरता कर, हम वैकुण्ठ में लौट आवेंगे।

यह सुन देवता गण अपने अपने स्थान को चले गये। भगवान् विष्णु ने सम्भल नगर में जा सुमति के गर्भ में वास किया, भगवान् विष्णु के गर्भ में आते ही सारा संसार सुन्दर दिखायी देने लगा। नदी, तालाव, पहाड़, द्वीप, बन आदि सभी जगहों में अपूर्व सुन्दरता दिखलायी देने लगी। सारे ऋषि और मुनि तथा साधु प्रसन्न हो गये। देवताओं के आनन्द का कुछ ठिकाना न रहा। अन्त में वैशाख मास की शुक्ल पक्ष की द्वादशी को भगवान् ने पृथ्वी पर अवतार लिया।

जब ब्रह्मा जी ने यह सुना कि भगवान् ने चतुर्भुज रूप धर कर पृथ्वी पर अवतार लिया है; तब उन्होंने अपने चतुर सेवक वायु [हवा] को बुलाया और उससे कहा:-

ब्रह्मा जी—हे पवन! तुम जा कर विष्णु भगवान् से कहो कि हे नाथ! तुम्हारे चतुर्भुज रूप का दर्शन देवताओं को भी नहीं मिलता, यह सोच कर आप चतुर्भुज मूर्त्ति छोड़ कर, साधारण मनुष्य के समान रूप धारण कीजिये।

यह सुन कर वायु वहाँ से भगवान् विष्णु के निकट गया और उसने उनसे ब्रह्मा जी का सन्देसा कहा। ब्रह्मा जी का सन्देसा सुन कर, भगवान् ने उसी समय चतुर्भुज रूप छोड़ कर, साधारण मनुष्य का रूप धारण किया। यह देख कर, उनके माता पिता को बड़ा अचम्भा हुआ। वे ठगे से खड़े रह गये; किन्तु भगवान् विष्णु ने माया कर के, उन्हें भुला दिया। वे समझने लगे कि पुत्र के दो ही हाथ थे। उसके चार हाथ होने का उन्हें भ्रम ही था।

भगवान् विष्णु को बालरूप में देखने के लिये परशुराम जी, कृपाचार्य जी, महर्षि वेदव्यास जी और द्रोणाचार्य जी के पुत्र अश्वत्थामा जी, भीख माँगने वाले ब्राह्मणों का वेष धर कर, ब्राह्मण विष्णुयश जी के यहाँ गये।

सूर्य के समान प्रतिभा-शाली इन चार ब्राह्मणों को आते देख, विष्णुयश जी नें उन्हें सादर बिठलाया, और उनकी पूजा की। जब वे आदर सत्कार पा कर बैठ गये, तब ब्राह्मण विष्णुयश जी भगवान् को गोद में ले कर, उन चारों के पास आये; तब चारों ने बालरूप भगवान् विष्णु को प्रणाम किया। उन्होंने उनका नाम कल्कि रखा और वे सब अपने अपने स्थान को चले गये।

जब भगवान् कल्कि कुछ बड़े हुए, तब उनके पिता विष्णुयश ने उन्हें पढ़ाना चाहा। वे बोलेः-

ब्राह्मण विष्णुयश जी-हे पुत्र! मैं तुम्हारा यज्ञोपवीत कर के तुम्हें सावित्री सुनाऊँगा। तब तुम वेद पढ़ना।

यह सुन कर भगवान् कल्कि बोलेः-

भगवान् कल्कि-वेद कौन है? सावित्री क्या है? यज्ञोपवीत [जनेऊ] पहिन कर, मनुष्य किस तरह संसार में ब्राह्मण कहलाता है?

पिता विष्णुयश जी-वेद भगवान् हरि के वाक्य हैं। सावित्री वेद माता है। संस्कारित त्रिगुण सूत्र को तिगुना धारण करने से मनुष्य ब्राह्मण कहलाता है। जो ब्राह्मण ब्रह्मवादी हैं, उन्हींके पास वेद रहते हैं। जिस ब्राह्मण के दसो संस्कार हो चुके हैं, वह ब्राह्मण

वेद की विधि से यज्ञ कर के, अध्ययन[1] से, तप से, स्वाध्याय से, भक्ति से भगवान् हरि को प्रसन्न करता है। इस लिये हम तुम्हारा उपनयन संस्कार करना चाहते हैं।

भगवान् कल्कि-ब्राह्मण के लिये जो दस संस्कार कहे गये हैं, वे कौन से हैं? और ब्राह्मण किस तरह भगवान् विष्णु की आराधना करते हैं?

ब्राह्मण विष्णुयश जी—ब्राह्मणी के गर्भ में ब्राह्मण से पैदा हुए बालक के दश संस्कार होते हैं। वे ये हैं:— [१] विवाह संस्कार [२] गर्भाधान संस्कार [३] पुंसवन संस्कार [४] सीमन्तोन्नयन संस्कार [५] जात-कर्म संस्कार [६] नाम-करण संस्कार [७] अन्न-प्राशन संस्कार [८] चूड़ा-करण संस्कार [९] उपनयन संस्कार और [१०] समावर्त्तन संस्कार। जो ब्राह्मण ऊपर लिखे संस्कारों से युक्त हैं वे त्रिसंध्या, सावित्री की पूजा, सावित्री का जप और सावित्री का पारायण कर के, सत्यवादी हो कर, तपस्वी हो कर, और धीर और धर्मात्मा हो कर, भगवान् विष्णु की पूजा करते हैं।

भगवान् कल्कि—जो ब्राह्मण सम्पूर्ण जगत का उद्धार करता है, जो ब्राह्मण साधुमार्ग में चल कर, हरि भगवान् को प्रसन्न करता है, वह ब्राह्मण कहाँ है?

पिता विष्णुयश जी—धर्मघातक, द्विजहिंसक, बलवान् कलि के अत्याचार से पीड़ित हो कर, धर्मात्मा ब्राह्मण दूसरे

---

[1] नियम पूर्वक पढ़ने को अध्ययन कहते हैं।

वर्ष१ को चले गये हैं। जो अल्प तपस्वी ब्राह्मण इस कलियुग में रह गये हैं वे सब धर्म-हीन, अकर्मी और इन्द्रियलोलुप हो गये हैं। अपनी रक्षा आप नहीं कर सकते, वे अब सारे पापों की जड़ हो गये हैं और वे शूद्रों की सेवा करने लगे हैं।

इसके बाद भगवान् कल्कि का यज्ञोपवीत हुआ और वे गुरु-गृह में वास करने के लिये चले गये।

---

१ पृथ्वी पर सात द्वीप हैं, उनके नाम ये हैं:—जाम्बु, प्लक्ष, शाल्मलि, कुश, क्रौंच, शाक और पुष्कर। इन द्वीपों के बहुत से विभाग हैं। हर एक विभाग को वर्ष कहते हैं।

भगवान् कल्कि का वर-लाभ।

महर्षि सूत जी बोले:—

भगवान् कल्कि को गुरु-गृह में जाते देख कर, महेन्द्र[1]पर्वत में रहने वाले, महर्षि परशु-राम जी उन्हें अपने स्थान में ले आये। आश्रम में उन्हें ला कर, वे बोले:—

परशुराम जी—मैं तुम्हें पढ़ाऊँगा। मैं महर्षि जमदग्नि का पुत्र हूँ। मैं वेदों का जानने वाला और धनुर्विद्या में पण्डित हूँ। मैं सारी पृथ्वी को जीत कर, इस महेन्द्राचल पर्वत पर तप करने आया हूँ। तुम यहाँ रह कर, मुझसे वेद और जो कुछ चाहो, पढ़ो।

यह सुन कर भगवान् कल्कि बहुत प्रसन्न हुए। वे वहीं रह कर वेद, वेदाङ्ग, धनुर्विद्या आदि पढ़ने लगे। जब वे इन सब में

---

१ महेन्द्र-पर्वत। गोन्दवन देश में, ऋषिकुल्या नाम की एक नदी है। वह नदी एक पर्वत से निकली है। पर्वत का नाम महेन्द्रमाली है, इसीको महेन्द्राचल पर्वत कहते हैं। यह पर्वत माला उड़ीसा के उत्तर गंजाम से, दक्षिण में गोन्दवन तक फैली हुई है। भारतवर्ष के सात कुलाचलों (बड़े पहाड़ों) में, महेन्द्र पर्वत भी एक है।

परिडत हो गये; तब वे गुरु को प्रणाम कर

भगवान् कल्कि–हे भगवन् ! कृपया मुझे बत स दक्षिणा से आप प्रसन्न होंगे । मे ने की इच्छा है। हे प्रभो ! कृपया को मुझ से कहें ।

परशुराम जी–हे देव ! ब्रह्मा जी ने, कलि को नाश करने के ये आपसे प्रार्थना की थी। इसीसे आपने भूभार उतारने के लिये पृथ्वी पर जन्म लिया है। आप मुझ से विद्या, शिव जी से हथियार, और सिंहल देश के राजा के यहाँ आपकी लक्ष्मीजी ने अवतार लिया है, उन्हें वहाँ से ले कर, कलि का नाश करेंगे। इसके बाद आप धर्म्म-हीन, कलि-प्रिय राजाओं को जीत कर और बौद्धों का नाश कर, धर्म्म-राज मरु और देवापि को स्थापित करेंगे। आपके इस कार्य के पूरे होने से हमे हमारी दक्षिणा मिल जायगी; क्योंकि तब हम बिना रोक टोक के दान, तप, यज्ञ आदि कर सकेंगे।

महर्षि परशुराम जी के ऐसे वचन सुन कर, भगवान् कल्कि, बिल्वोदकेश्वर महादेव जी के पास आये और उनकी स्तुति की। जब भगवान् कल्कि अपनी स्तुति समाप्त कर चुके, तब भूतभावन महादेव प्रकट हुए और प्रसन्न हो कर, उन्होंने भगवान् कल्कि को एक शीघ्रगामी घोड़ा, गरुड़, एक तोता (जो सब वेद पढ़ा है) तथा एक तलवार दी।

श्री महादेव जी से ये चारों वस्तु पा कर, भगवान् कल्कि उन्हें नमस्कार कर, उस मिले हुए घोड़े पर सवार हो, सम्भल ग्राम को चले।

वहाँ पहुँच कर उन्होंने यथोचित रीति से अपने माता-पिता को और भाइयों को प्रणाम किया। भगवान् कल्कि ने उन सब को अपनी कथा सुनायी और शिव जी के वरदान का भी हाल कहा। उनके तीनों बड़े भाई गर्ग्य, भर्ग्य और विशालादि इन बातों को सुन कर बड़े प्रसन्न हुए।

होते होते यह हाल राजा विशाखयूप ने सुना कि भगवान् कल्कि ने अवतार धारण किया है। उसने देखा कि उसकी नगरी के रहने वाले सभी ब्राह्मण धर्म में प्रवृत्त हो गये हैं और चारों वर्ण अपने अपने धर्मों में दृढ़ हो गये हैं। इन सब बातों को भगवान् कल्कि की महिमा समझ, राजा स्वयं धर्म कर्म करने लगा।

जब उसने सुना कि भगवान् कल्कि जी, उसकी महिष्मती[1] नगरी में आ रहे हैं, तब वह बड़े आदर के साथ उन्हें लेने, अपनी नगरी से बाहर आया।

उसने देखा कि भगवान् कल्कि सुन्दर घोड़े पर सवार हैं। कवि, प्राज्ञ, सुमंत्र उनके आगे और गर्ग्य, भर्ग्य और विशालादि उनके पीछे हैं। उनकी तेजोमय मूर्त्ति देख कर, राजा विशाखयूप आदर के साथ झुक कर, उन्हें दण्डवत प्रणाम करने लगा और उसी समय से वह पूरा वैष्णव हो गया।

---

१ महिष्मती—यह नर्मदा के किनारे है। इसका वर्त्तमान नाम चुली महेश्वर है।

राजा के पास भगवान् कल्कि थोड़े दिनों रहे और उन्होंने वहाँ रह कर चारोंवर्णों के धर्मों को कहा। राजा के प्रश्न करने पर वे बोलेः—

भगवान् कल्कि—मैं ही परलोक हूँ, मैं ही सनातन धर्म हूँ, मेरे ही करने से काल, स्वभाव और संस्कार होते हैं। चन्द्रवंशी देवापि राजा और सूर्यवंशी महाराज मरु को मैं इस पृथ्वी पर स्थापित कर, फिर से सत्ययुग को वर्त्ताऊँगा।

इसके बाद उन्होंने धर्म की व्याख्या करनी आरम्भ की।

४—महादेव जी का वर-दान।

सूत जी बोले:—

इसके उपरान्त धर्ममय भगवान् कल्कि जी महिष्मती नगरी के राजा विशाखयूप की सभा में सूर्य के समान शोभा देने लगे। वे बोले:—

भगवान् कल्कि जी—समय आने पर ब्रह्माण्ड का नाश होगा। प्रलय होने पर सारे पदार्थ मुझमें मिल जाँयगे। सृष्टि के पहिले केवल मैं ही था और सृष्टि के बाद मैं ही रह जाऊँगा। मेरी विराट् मूर्त्ति से वेद-मुख भगवान् ब्रह्मा जी पैदा हुए। उन ब्रह्मा जी ने मेरे एक अंश [हिस्सा] जीव, और मेरे दूसरे अंश माया [प्रकृति] को मिला कर, इस जीव जाति को उत्पन्न किया। इसी तरह मनु आदि प्रजापति और देवता गण पैदा हुए। मेरे ही अंश से यह माया रूपी सृष्टि जिसमें देवता, मनुष्य, स्थावर, जङ्गम आदि शामिल हैं-पैदा हुई है। मेरे जिस अंश ने, इस माया रूपी सृष्टि को बनाया है, जब यह

मायारूपी सृष्टि नाश हो जायगी; तब वह अंश भी [जिसने सृष्टि को पैदा किया था] मुझमें मिल जायगा। ब्राह्मण मेरे आत्मस्वरूप हैं; क्योंकि वे यज्ञ, अध्ययन, तप, दानादि श्रेष्ठ काम कर के मेरी सेवा करते हैं। वेद मेरी पूर्ण-मूर्त्ति हैं। जितना प्यारा मुझे वेदपाठी ब्राह्मण है उतना प्यारा मुझे कोई देवता भी नहीं है। जगत निवासी मेरे शरीर हैं, ब्राह्मण मुझे 'वेदपाठ कर प्रसन्न करते हैं। इस लिये ब्राह्मण सारे संसार के जीवों को प्रसन्न करते हैं। इसी तरह ब्रह्मा के प्रचारित वेदों से मेरा शरीर [सृष्टि] पुष्ट होता है और ब्राह्मण इसमें सहायता करते हैं। इस लिये वे श्रेष्ठ हैं।

यह सुन राजा विशाखयूप ने पूँछाः—

राजा विशाखयूप–ब्राह्मण के लक्षण क्या हैं? आपकी भक्ति वे किस प्रकार करते हैं?

भगवान् कल्कि–ब्राह्मण कन्या के बनाये हुए सूत्र को तिगुना कर के, उसको फिर तिगुना करने से यज्ञ सूत्र बनता है। वेद प्रवर मिला कर, उस तिगुने सूत्र में गाँठ लगावै। इस यज्ञोपवीत को सामवेदी और यजुर्वेदी ब्राह्मण नाभि तक रखें। यज्ञोपवीत को बायें कन्धे पर रखने से बल बढ़ता है। ब्राह्मण चन्दनादि का तिलक लगावें। हे राजन्! चारों आश्रमों के धर्म में जो ब्राह्मण कुशल हैं, जो ब्राह्मण मेरे धर्मों के प्रचार करने वाले हैं, ऐसे जो पृथ्वी के देवता ब्राह्मण, वे

सदा संसार में पूजने योग्य हैं, ज्ञान में बड़े, तपस्या में बड़े, ब्राह्मणों के छोटे छोटे बालक भी मुझे बहुत प्यारे हैं। उन्हींके वचनों को पालने के लिये मैं पृथ्वी पर अवतार लेता हूँ।

भगवान् के ऐसे वचन सुन, वैष्णवों में श्रेष्ठ, राजा विशाखयूप उनको प्रणाम कर चले गये।

सन्ध्या होने पर वह तोता वहाँ आया और भगवान् कल्कि की स्तुति कर बैठ गया। उससे भगवान् कल्कि जी बोलेः—

भगवान् कल्कि जी—आप कहाँ से आये हैं? और वहाँ आप क्या खाते हैं?

तोता बोला—मैं सिंहलद्वीप से आ रहा हूँ, वहाँ मैंने जो विचित्र कौतुक देखा है उसे मैं आप से कहता हूँ। सिंहलद्वीप के राजा बृहद्रथ की रानी कौमुदी के गर्भ से एक अति सुन्दरी कन्या का जन्म हुआ है, सिंहलद्वीप में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ये चारों वर्ण रहते हैं। राजा बृहद्रथ बड़ा बलवान् है। उसने अपनी कन्या का नाम पद्मा रखा है। जिस तरह पार्वती जी महादेव जी के लिये तपस्या किया करती थीं। उसी तरह वह आपके लिये तपस्या किया करती है। उसको जगज्जननी लक्ष्मी जी का अवतार जान कर हर्ष पूर्वक महादेव जी पार्वती जी समेत प्रगट हुए। भगवान् महादेव जी को अपने सामने खड़ा देख, वह कन्या लज्जा से सिर नीचा कर के

खड़ी हो गयी । तब महादेव जी ने उससे कहा-'हे शुभगे ! तुम्हारे पति नारायण तुमसे हर्ष पूर्वक विवाह करेंगे । जो मनुष्य, देवता या किन्नर तुमसे विवाह करना चाहेगा वह स्त्री हो जायगा । हे कमले ! तुम हर्ष पूर्वक अपने घर जाओ और निश्चिन्त हो कर रहो ।,

हे भगवन् ! मनवांच्छित फल पा कर श्री लक्ष्मी जी का अवतार पद्मा, शशाङ्क-शेखर श्री महादेव जी को प्रणाम कर, अपने पिता के घर चली गयीं ।

५-पद्मा-स्वयम्बर ।

तो ते ने कहा:—
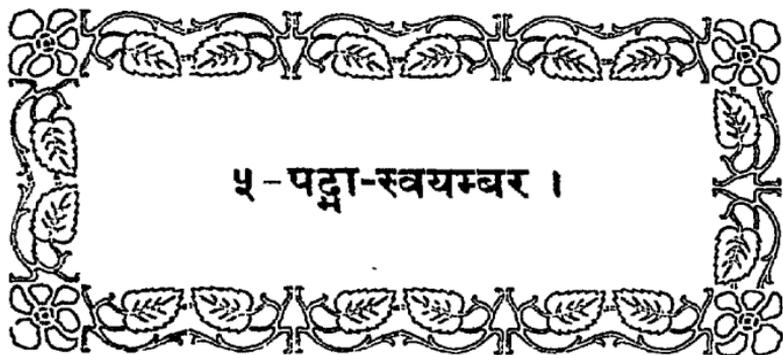
अपनी पुत्री पद्मा को युवती देख कर, राजा बृहद्रथ को उसके विवाह की चिन्ता हुई । उसने अपनी रानी कौमुदी से कहाः-

राजा बृहद्रथ-हे शुभगे ! पद्मा के विवाह के निमित्त उत्तम कुल में उत्पन्न हुए किस राज-कुमार को स्वीकार करूँ ?

रानी कौमुदी ने शिव जी के वरदान का हाल सुन रखा था। सो उसने अपने पति से शिव के वरदान का हाल कहा और अन्त में वह बोलीः-

रानी कौमुदी-मुझे इस बात का पूरा विश्वास है कि श्री भगवान् विष्णु ही पद्मा के साथ विवाह करेंगे ।

राजा बृहद्रथ-भगवान् विष्णु इसके साथ कब विवाह करेंगे ? कौमुदी ! हमारा ऐसा भाग्य कहाँ, और हमने ऐसा कौनसा बड़ा भारी अच्छा काम किया है जिसके बल सर्वस्वामी भगवान् श्री विष्णु हमारी कन्या के पति हो कर, हमें कृतकृत्य करें ।

राजा ने पद्मा का स्वयम्वर करना निश्चित किया और सारे राजाओं को निमंत्रित किया। सिंहलद्वीप में तरह तरह के मङ्गलाचार होने लगे। सारे सिंहाली राजधानी को सजाने लगे। राजाओं के रहने के लिये सिंहल राज ने अलग अलग जगह नियत की। पद्मा से विवाह करने की इच्छा रखने वाले सारे राजा लोग अपने २ लाव़लश्कर ले कर, वहाँ आने लगे। उनके मुकुटों से सिंहलराज की राजधानो आच्छादित हो गयी। उनके रथ और घोड़ों के मारे राजधानी को सड़कों पर चलना कठिन हो गया। उनके ऊपर सफ़ेद छत्र ताने गये और सफ़ेद ही चवर उनके ऊपर ढुलाये जाते थे। रुचिराश्व, सुकर्मा, मदिराक्ष, दृढ़ाशुग, कृष्णसागर, पारद, जोमूत, क्रूरमर्दन, काश, कुशाम्बु, वसुमान, कङ्क, क्रथन, सञ्जय, गुरुमित्र, प्रमाथी, विजृम्भ, अक्षम आदि वहुत से नामी और पराक्रमशाली राजागण सिंहल-देश में इकट्ठे हुए।

धीरे धीरे स्वयम्वर का दिन पास आ गया। सारे राजा तरह तरह के कपड़े और गहने पहिन रङ्गभूमि में पधारे। राजा जयद्रथ ने सब को आदर के साथ सुन्दर सुन्दर आसनों पर विठाया।

सब के आ जाने पर सिंहल देश के पराक्रमी राजा ने अपनी सुन्दरी कन्या को उस सभा में बुलवाया। थोड़ी ही देर में जगज्जननी पद्मा उस रङ्गभूमि में आयीं। सन्तरियों ने आदर के साथ उनको प्रणाम किया। उस समय वह नाना प्रकार के गहने पहिने हुए थीं और तरह तरह के कपड़े उनकी शोभा बढ़ा रहे थे। मैं स्वर्ग-लोक, मृत्यु-लोक, पाताल-लोक आदि सब लोकों में जाता हूँ; पर हे प्रभो! मैंने वैसी सुन्दरी कन्या और कहीं नहीं देखी।

धीरे धीरे, राजकुमारी पद्मा अपनी सहेलियों से घिरी हुई रङ्गभूमि में घूमने लगी। उसको देख देख कर राजा लोगों के हृदय में खोटे विचार पैदा होने लगे। उसी समय उनके अस्त्र शस्त्र खुल खुल कर पृथ्वी पर गिरने लगे। एकाएक वे सब राजा-जिनके हृदयों में राजकुमारी पद्मा के लिये खोटे विचार पैदा हुए थे, सब स्त्री हो गये। अपने को स्त्री देख, वे कुछ भी दुखित या लज्जित न हुए; किन्तु वे सहेली बन, उनके पीछे पीछे चलने लगे।

स्वयम्बर देखने के लिये, मैं पास ही एक पेड़ पर बैठा था। यह दृश्य देख कर पद्मा दुखी हो रोने लगीं। हे स्वामिन्! मैंने उनका विलाप सुना था। वे सारे आभूषणों को उतार पैर के अँगूठे से पृथ्वी खोदने लगीं। पृथ्वी खोदते खोदते वे विलाप भी करती जाती थीं।
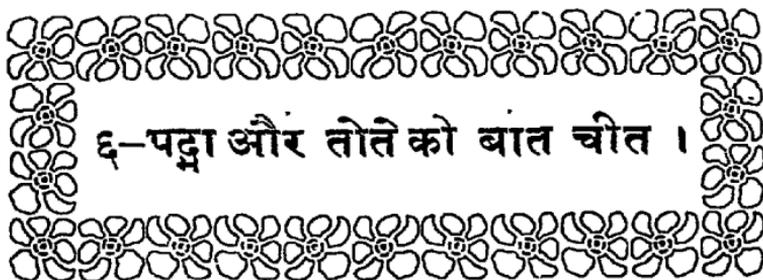
६–पद्मा और तोते की बात चीत ।

तोता बोला:–

इसके बाद भगवान् विष्णु को पति रूप में चाहने वाली पद्मा, पास में बैठी विमला नाम की सखी से बोली:–

पद्मा—हे विमले ! क्या विधाता ने हमारे भाग्य में यही लिखा है कि हमको देखते ही पुरुष स्त्री हो जाँय ? जिस तरह ऊसर में बीज बोने से वह बीज नहीं उगता; उसी तरह मेरा महादेव जी की तपस्या करना भी व्यर्थ हुआ। यदि महादेव जी के वचन व्यर्थ हो जाँय और भगवान् हरि मुझे न मिलें; तो मैं श्री हरि भगवान् का ध्यान कर के इस शरीर को अग्नि-कुण्ड में भस्म कर दूँगी ।

हे भगवन् ! पद्मा को इस प्रकार विलाप करते देख, मैं आपके पास उसका समाचार देने आया हूँ । सूत जी कहने लगे कि तोते की ऐसी बातें सुन, भगवान् कल्कि उससे बोले:–

भगवान् कल्कि–हे तोते ! तुम सिंहलदेश में जा कर, हमारी प्रिया पद्मा को धीरज देना। उनसे हमारी सब कथा कह कर, हे विहङ्ग ! तुम फिर लौट आना। पद्मा

हमारी है, हम पद्मा के पति हैं—यह बात तुम जा कर उनको समझा देना।

हे ऋषि वर्ग! भगवान् कल्कि की ऐसी आज्ञा पाने पर, वह तोता उड़ा। समुद्र पार कर, वह तोता सिंहलद्वीप में पहुँचा और नागकेशर के एक पेड़ पर बैठ कर, वहाँ पर बैठी पद्मा से मनुष्य भाषा में वह बोलाः—

तोता—हे पद्मा! तुम कुशल से तो हो? तुम्हारे अङ्ग में कमल कीसी गन्ध है, तुम्हारी आँखें नीले कमल जैसी हैं, तुम्हारे हाथ में कमल है इससे मालूम होता है कि तुम दूसरी लक्ष्मी हो।

तोते के ऐसे विचित्र वचन सुन पद्मा बोलीः—

पद्मा—तुम कौन हो? कहाँ से आये हो? तुम तोते का रूप धरे हुए देवता हो या दैत्य हो? तुम हमारे पास किस लिये आये हो?

तोता—मैं तोता हूँ। मैंने सब शास्त्र और वेद पढ़े हैं। जहाँ मेरी इच्छा होती है वहीं मैं जाता हूँ। देव-सभा, गन्धर्व-सभा, राज-सभा, सभी जगह मैं आता जाता हूँ। मैं आकाश में स्वच्छन्दता से घूमता हूँ। तुमको दुखी देख कर, मैं यहाँ आया हूँ। तुमने सारे आभूषण त्याग दिये हैं, कोई सखी भी तुम्हारे सङ्ग नहीं है, तुमने राज-कुमारी हो कर भी ये सब क्यों छोड़ रखे हैं? हे पद्मा! मैं तुम्हारे इस सन्ताप का कारण पूँछता हूँ। हे बृहद्रथ की कन्या! कहो इस समय तुम्हारे मानसिक दुःख का क्या कारण है? हे बहिन! तुम्हारा यह शरीर विना रोग के क्यों दुबला हो गया है?

पद्मा—रूप ही से क्या होता है? कुल ही से क्या होता है? धन ही से क्या होता है? ऊँचे वंश में जन्म लेने ही से क्या लाभ होता है? जिसके विरुद्ध विधाता है उसको इन सबसे कुछ भी लाभ नहीं होता। हे कीर[१]! यदि मेरा हाल जानना चाहते हो, तो सुनो। मैंने अपनी बाल्यावस्था और किशोर-अवस्था में तपस्या की थी। उस तपस्या पर प्रसन्न हो महादेव जी पार्वती जी के साथ प्रकट हुए और मुझसे बर माँगने को कहा। मैं लज्जा से कुछ न बोल सकी, मुझे इस तरह खड़ी देख, शिव जी ने कहा कि—'हरि भगवान् तुम्हारे स्वामी होंगे। चाहे वह देवता, मनुष्य या गन्धर्व ही क्यों न हो-जो तुम्हें खोटी निगाह से देखेगा वह तत्काल स्त्री हो जायगा।' ये जो मेरी सखियाँ हैं, ये प्रायः सब पहिले राजा थीं। मेरे स्वयम्वर का समाचार पा ये सब मुझसे विवाह करने की इच्छा से आये थे। जब मैं हाथ में सुन्दर रत्नमाला ले कर, रङ्गभूमि में आयी तब मुझे देख कर, मुझे खोटी निगाह से देखने वाले, ये सब राजा गण स्त्री हो गये। अन्त में, ये सब मेरे पीछे पीछे सखी की भाँति चलने लगे। ये सब स्त्री रूपी राजा, मेरे साथ ही भगवान् विष्णु की पूजा किया करते हैं।

---

१ तोता।
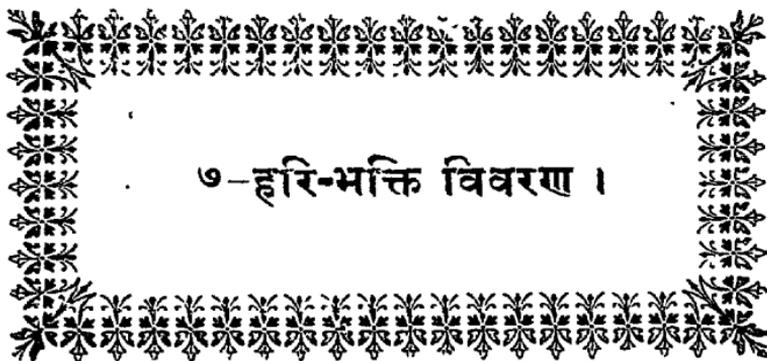
७-हरि-भक्ति विवरण ।

तोते ने पूँछा-हे देवी ! तुम बड़ी भाग्यवान् हो, जो तुम महादेव जी की शिष्या हुई हो। उन्होंने जो तुमसे श्री विष्णु पूजा की विधि कही है, उसे सुनने की मेरी इच्छा है, मैं बड़ा भाग्यवान् हूँ जो मैं तुम्हारे पास आ गया हूँ । अब मुझसे पाप नाशक श्री विष्णु भगवान् की पूजा की विधि कहो ।

पद्मा—शिव जी की कही हुई विष्णु-पूजा अत्यन्त पवित्र है । उसके भक्ति पूर्वक सुनने कहने और करने से संसार के सारे पाप नष्ट हो जाते हैं ।

उसे सुनो । प्रातःकाल स्नान कर, नित्य-कर्म को समाप्त कर, पवित्र हो, मनुष्य आसन पर बैठे । फिर मन को वस में कर, पूर्व मुख हो अंगन्यास, भूतशुद्धि और अर्घ्य स्थापित करै। फिर भगवान् विष्णु का हृदय में आह्वान करै और उनकी पूजा करै और मंत्र जपै, इसके बाद भगवान् विष्णु का सिर से ले कर पैर तक ध्यान करै ।

जा पर मनि-मय मुकुट-प्रभा अतिशय सुहात है ॥
जा में लिपटो हरि सिंगार को पीन हार है।
हरि के तिन ललाट ग्रीवा कों नमस्कार है ॥

[११]

मेघ वर्ण अति पीन सूर्य से कान्ति युक्त हैं।
इन्द्र-धनुष सी भौंह, पीत पट पंहिने प्रभु हैं ॥
लोकातीत, अपूर्व मूर्त्ति वाले जो हरि हैं।
जिनको आश्रय ग्रहण करें हम पापी अति हैं ॥

[१२]

मैं अति दीन, मलीन, हीन सेवा सों प्रभु की।
मम काया है बनी पाप औ ताप विविधि की ॥
मैं प्रभु ! मत्सर, मोह लोभ सों गयो सतायो।
वासुदेव भगवान् ! त्राहि तव सरनन आयो ॥

श्रीधर

८—कल्कि-आगमन ।
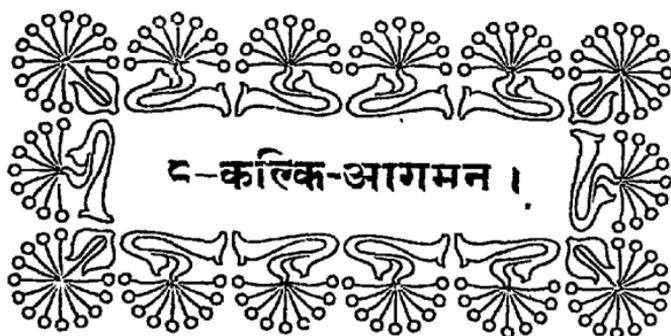
सूत जी बोले कि पद्मा कहने लगीः—

इस तरह चरण से ले कर केश पर्यन्त जगदीश्वर का ध्यान करै और मूल-मंत्र का जप करै। जप कर के पूजक, भगवान् विष्णु को दण्डवत प्रणाम करै। इसके बाद विश्वक्सेन आदि को अर्घ्य नैवेद्य आदि दे कर, सर्वव्यापी भगवान् विष्णु का स्मरण करै, फिर भगवान् का प्रसाद पावै। हे कीर! इस तरह मैंने तुमसे कमलापति की पूजा कही।

तोता—हे साध्वी! तुमने मुझ जैसे पापी को संसार से मुक्ति दिलानेवाले भगवान् विष्णु की भक्ति के लक्षण कहे, किन्तु तुम मुझे साक्षात् लक्ष्मी ही जान पड़ती हो। तुम्हारे समान रूप शील और गुण वाली स्त्री मैंने और कहीं नहीं देखी, और न तुम्हारे योग्य मैंने कहीं वर ही देखा। किन्तु समुद्र के उस पार एक महात्मा ने जन्म लिया है। वे अद्भुत रूपवान्

गुणवान् और साक्षात् ईश्वर हैं. उनका शरीर ब्रह्मा का बनाया हुआ नहीं जान पड़ता। तुम असीम तेजस्वी विष्णु भगवान् के जिस रूप का ध्यान करती हो, उससे उनमें कुछ भी अन्तर नहीं है।

पद्मा–हे कीर! क्या कहा? फिर तो कहो, उन्होंने कहाँ पर जन्म लिया है? यदि तुम उनके किये हुए कुछ कामों को जानते हो, तो कहो। तुम पेड़ से उतर कर नीचे आओ, तुम मेरे अतिथि हो, मैं तुम्हारा सत्कार करूँगी। आओ फल खा कर मीठा और शुद्ध दूध पियो। मैं तुम्हें बहुमूल्य रत्नों के आभूषण पहिनाऊँगी। तुम्हारे वचन सुन कर ही मेरे मन का दुःख दूर हो गया। मैं सखियों समेत तुम्हारी सेवा करने को तयार हूँ, कहो मैं तुम्हारे लिये क्या करूँ?

राजा बृहद्रथ की कन्या पद्मा के ऐसे विनीति वचन सुन, वह तोता धीरे धीरे राजकुमारी के पास गया और कहने लगाः–

तोता–भगवान् ब्रह्मा जी की प्रार्थना से और धर्म स्थापन करने के लिये भगवान् विष्णु ने सम्भल नगर के विष्णुयश नामक ब्राह्मण के घर जन्म लिया है। वे चार भाई हैं। जनेऊ होने के बाद वे महर्षि परशुराम जी से विद्या पढ़ने गये। वहाँ धनुर्वेद और गान्धर्व वेद पढ़ वे महादेव जी के पास गये और उनसे एक घोड़ा, एक तलवार, मुझे [तोते को] एक कवच और वर ले कर लौट आये। फिर उन्होंने

विशाखयूप राजा के पास जा कर उसे धर्म-शिक्षा दी और अधर्म को दूर किया।

यह [illegible] ेन्न हुई। उसने तोते को तरह तरह के बहुमू [illegible] और कहा:—

पद्मा—मुझे जो कुछ कहना है उसे तो तुम जानते ही हो, और अधिक मैं क्या कहूँ। उनसे कहियेगा कि महादेव जी का वरदान मुझे शापरूप हो गया है। मेरी ओर से प्रणाम कर उनसे यहाँ का सब हाल कहना।

पद्मा का सन्देसा ले और उसे ढाँढ़स दे वह तोता वहाँ से उड़ा और सम्भल में जा पहुँचा। भगवान् कल्कि उसका आना सुन, बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने उसे अपनी गोद में ले लिया और उस पर हाथ फेरते हुए वे बोले:—

भगवान् कल्कि जी—तुम किस देश से आ रहे हो? तुमने वहाँ कौन सी विचित्र वस्तु देखी? तुम अब तक कहाँ थे? ये बहुमूल्य मणि मण्डित आभूषण तुमने कहाँ पाये?

कल्कि भगवान् के ऐसे वचन सुन तोते ने सारी कथा कह सुनायी। यह सुन वे शीघ्र ही अपने घोड़े पर सवार हो, और तोते को साथ ले, सिंहलद्वीप की ओर चले। जब वे सिंहलपुरी पहुँचे तो उन्होंने देखा कि सारे गृह, महल, दूकान आदि तरह तरह की मालाओं से सजे हैं। नगर में चारों ओर चहल पहल

मची है। जो सरोवर नगर के बाहर हैं, उनमें राजहँस कि[illegible] शरीर रहे हैं। खिले हुए कमलों के आस पास भौंरे गुञ्जार रहे [illegible] । तुम ओर हँस, सारस, जलमुर्ग, दात्यूह आ[illegible] कलरव रूप का हैं। हवा धीरे धीरे बह रही है। [illegible] में कदम्ब, कुद्दाल, शाल, ताल, आम, मौलश्री, [illegible], खजूर, बिजौरा, नीबू, अर्जुन, शिंशपा, नारियल आदि सुन्दर वृक्ष शोभा दे रहे हैं।

यह सब देख कल्कि जी ने वहाँ स्नान करने की इच्छा प्रकट की। उस समय तोता पद्मा के पास उनके आने की सूचना देने गया।

९--पद्मा और कल्कि का साक्षात्।

सूत जी बोले,--घोड़े से उतर कर, भगवान् कल्कि ने तोते को पद्मा के पास भेजा और आप कदम्बों के कुञ्ज के नीचे एक स्फटिक की शिला पर बैठ गये।

तोता पद्मा के महल में गया और वहाँ वह नागकेशर के पेड़ पर बैठ गया। उसने वहाँ देखा कि पद्मा के मुख पर उदासी छा रही है और वह पत्तों के ऊपर पड़ी है। चारों ओर से सहेलियाँ उसे घेरे हैं और वह हाथ में कमल लिये हिला रही है। उस समय तोता बोल उठा और पद्मा को समझाने लगा।

उसे देख पद्मा बोली--तुम राज़ी ख़ुशी तो हो, कहो क्या समाचार लाये हो? आओ यहाँ आ कर बैठो।

तोता--हाँ हम तो सकुशल हैं। तुम अपनी कुशल हम से कहो।

पद्मा--हे तोते! जब से तुम यहाँ से गये हो; तब से मैं बहुत व्याकुल हो रही हूँ।

तोता--अब हम औषधि दे कर तुम्हारा सब दुःख दूर किये देते हैं।

पद्मा—अरे, मेरे ऐसे भाग्य कहाँ, जो मुझे औषधि मिल जाय।

तोता–पद्मा ! तुम्हारे लिये सब सुलभ है। संसार में ऐसी कौनसी वस्तु है जो तुम्हें दुर्लभ है।

पद्मा—अरे कीर ! तो फिर बतला, मेरा कार्य कहाँ और कब सिद्ध होगा ?

तोता—तुम्हारा कार्य यहीं और अभी सिद्ध होगा। मैं उन्हें तालाब के पास बैठा आया हूँ।

यह सुन पद्मा ने तोते को उठा लिया और वे उसे प्यार करने लगीं। फिर उसने अपनी सखियों को आज्ञा दी कि वे तयार हों क्योंकि वह सरोवर में स्नान करने जाना चाहती है। शीघ्र ही पद्मा अपनी आठ सखियों समेत, पालकी में बैठ और तोते को ले, ठीक उसी भाँति सरोवर को चली जिस तरह रुक्मिणी जी भगवान् कृष्ण जी से मिलने गयी थीं।

जब लोगों ने सुना कि पद्मा इस रास्ते से आवेंगी, तो वे डरने लगे कि कहीं हम उसे देख कर स्त्री न हो जाँय। यह सोच वे सब राह छोड़ भागने लगे।

थोड़ी ही देर बाद पद्मा सरोवर पर पहुँची और अपनी सखियों समेत स्नान करने लगी। स्नान कर के वह तोते के बताये कदम्ब के पेड़ के नीचे गयी। वहाँ उसने सहस्रों सूर्य के समान प्रभा सम्पन्न भगवान् कल्कि को, स्फटिक की शिला पर, सोते हुए देखा।

थोड़ी ही देर में भगवान् जागे और सामने पद्मा को देख वे प्रसन्न हुए। वे उससे तरह तरह की बातें कहने सुनने लगे।
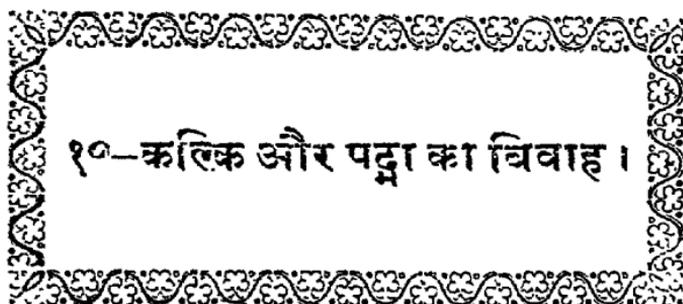
१०—कल्कि और पद्मा का विवाह।

भगवान् कल्कि की बातें सुन पद्मा बोलीः—

पद्मा—हे रमापति ! मुझ सी तुच्छ दासी पर प्रसन्न हो। हे विशुद्ध हृदय ! मैं आपको पहिचान गयी हूँ। मैं आपकी शरण आयी हूँ। मेरी रक्षा करो। मैं धन्य हूँ। मैं बड़ी भाग्यवान् हूँ। तप, दान, जप और व्रत कर के मैंने आपके देव-दुर्लभ कमल रूपी चरणों को पाया है। आप मुझे आज्ञा दें कि मैं आपके चरण कमल का स्पर्श कर के घर जाऊँ और पिता को आपके शुभागमन की सूचना दिलवाऊँ।

यह कह कर, पद्मा भगवान् के चरण रूपी कमल को स्पर्श कर के घर गयीं और दूत द्वारा अपने पिता से विष्णु भगवान् के आगमन की सूचना दिलवायी।

जब बृहद्रथ राजा ने भगवान् कल्कि का आगमन सुना, तब वह बहुत प्रसन्न हुआ। फिर राजा अपने साथ पुरोहित, ब्राह्मण,

भाई बन्धु, नगर निवासी और पूजा की सामग्री ले बाजे गाजे समेत उन्हें लेने चले।

कदम्बों की कुञ्ज में, बृहद्रथ राजा ने देखा कि सारे संसार के अधिपति भगवान् विष्णु स्फटिक की शिला पर विराजमान हैं, जिस तरह से घने बादलों में बिजुली शोभा देती है या जिस तरह उनके ऊपर इन्द्रधनुष शोभा पाता है उसी तरह भगवान् कल्कि के नीले बदन पर पीताम्बर शोभा देता है। उन प्रभामय देवता को देख, राजा ने उनकी विधि विधान से पूजा की। फिर राजा ने उनसे कहाः—

राजा बृहद्रथ–हे जगदीश्वर! जिस तरह यदुनाथ मान्धाता के पुत्रों से बन में मिले थे; उसी तरह आपका शुभागमन मेरे लिये हुआ है।

इतना कह कर वे उन्हें अपने महलों में ले आये और उनके साथ अपनी कन्या का विवाह कर दिया।

जो राजा पद्मा को खोटी निगाह से देख कर स्त्री हो गये थे वे सब वहाँ आये और उन सब ने कल्कि भगवान् की पूजा की।

कल्कि भगवान् ने उनको स्नान करने की आज्ञा दी और उन्हें अपनी चरण रज दी: जिससे वे सब फिर पुरुष हो गये।

भगवान् कल्कि का ऐसा अच्युत प्रभाव देख, सारे राजा उनकी शरण आये और उनकी स्तुति करने लगे।

राजा गण—हे देव, तुम्हारी जय हो। तुम्हारे ही प्रभाव से सृष्टि और प्रलय होती है। तुम्हारे ही प्रभाव से सारा संसार यथारीति चला जाता है। जब त्रिलोक में प्रलय हुई; तब तुमने वेदध्वनि न सुन कर, जन-

शून्य स्थान में महामूर्त्ति धारण कर के, प्राणियों की रक्षा की थी। हे देव! तुम्हींने धर्म की रक्षा करने के लिये मीन अवतार धारण किया था।

जब दानव सैन्य इन्द्रराज को पराजित करने लगी, जब त्रिभुवन जीत कर दैत्यराज, इन्द्र को मारने चला; तब हे देव! उसका नाश करने के लिये आपने वाराह अवतार लिया।

फिर जब देवता और दानव मिल कर समुद्र मन्थन करने लगे, और जब मन्दराचल रखने का स्थान न पा कर, वे व्याकुल हुए; तब आपने उनकी सहायतार्थ कूर्मावतार धारण कर, अपनी पीठ पर मन्दराचल रखा।

फिर जब महाबलवान् महा-पराक्रम-शाली, त्रिभु-वन विजयी, हिरण्यकशिपु देवताओं को सताने लगा, और जब देवता लोग भयभीत हुए, तब आपने दैत्यराज के बध करने का संकल्प किया। जब वह आपके भक्तश्रेष्ठ प्रह्लाद को दुःख देने लगा; तब हे देव! आपने नृसिंह अवतार धारण कर अपने नखों से उसका पेट फाड़ पृथ्वी का भार उतारा।

फिर हे देव! जब आपके भक्त इन्द्र को उतार कर, दैत्यराज बलि ने इन्द्रासन छीनना चाहा, तब हे भक्त-वत्सल! आपने वामन अवतार धारण कर बलि से तीन पग पृथ्वी माँगी। जब उसने दान देना

स्वीकार किया तब आपने विराट् मूर्त्ति धारण कर सारे विश्व को दो ही पैर में नाप लिया और तीसरे पैर से स्वयं बलि राजा को नाप लिया और उसे पाताल का राज्य दे आप उसके वरदान माँगने पर, उसके द्वारपाल हुए ।

फिर जब बल से गर्वित हय हयादि राजाओं ने धर्म की मर्यादा तोड़नी आरम्भ की; तब हे देव ! आपने परशुराम रूप से अवतार लिया और पिता की धेनु हरण किये जाने पर, आपने इक्कीस बार पृथ्वी को क्षत्रिय-हीन कर दिया ।

फिर जब पुलस्त्य के नाती रावण के उपद्रवों से त्रिलोक सन्तापित हुआ,तब आपने राजा दशरथ के यहाँ अवतार लिया । फिर सीता जी के हरण किये जाने पर आपने कुपित हो, हे देव ! बानरों की सेना साथ ले उसका नाश किया ।

फिर आपने कृष्णावतार धर, अनेक दैत्य और दानवों का नाश कर पृथ्वी का भार उतारा ।

फिर जब आपने लोगों की ब्रह्मा के वैदिक धर्म में घृणा देखी, तब मिथ्या-प्रपञ्च को अलग करने के लिये आपने बुद्ध अवतार लिया ।

इस समय आपने कलि का ध्वंस करने के लिये अर्थात् बौद्ध, पाखण्डी और म्लेच्छ आदि का नाश कर, फिर से सनातन धर्म का उद्धार करने

के लिये कल्कि अवतार लिया है। आपने ही हे देव! हम सब को स्त्री से फिर पुरुष बनाया है। इस लिये हम सब आपकी बड़ाई का बखान करने में असमर्थ हैं।

ब्रह्मा आदि आपकी लीला नहीं जान सकते,उनको भी आपके चरणों का दर्शन दुर्लभ है। फिर हम लोग तो महाकामी, मृगतृष्णा से पीड़ित विषयी जीव हैं, हमारे लिये तो आपका दर्शन ही दुर्लभ है। आज हमारे बड़े हो भाग्य हैं। हे देव! हम आपकी शरण आये हैं। हम पर दया कीजिये।
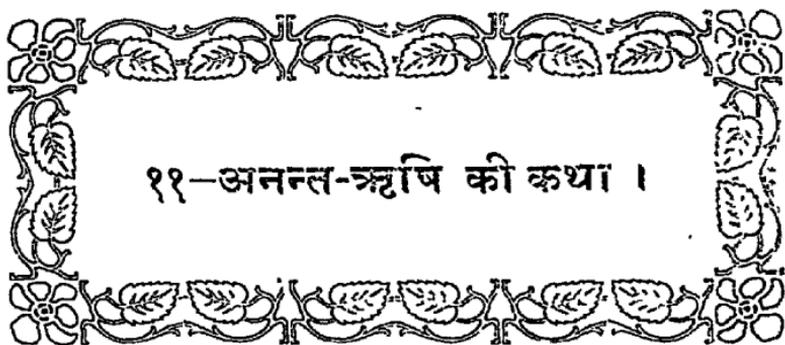
११—अनन्त-ऋषि की कथा ।

राजाओं की स्तुति सुन कर, भगवान् कल्कि उनसे चारों वर्णों के धर्म कहने लगे । फिर उन्होंने राजाओं से गृहस्थ और विरागियों के धर्मों का वर्णन किया ।

यह सुन राजाओं के हृदय पवित्र हुए। इसके बाद कल्कि जी को नमस्कार कर वे बोलेः—

राजा लोग—मनुष्य गण स्त्रीत्व और पुरुषत्व के भेद से कैसे बच सकते हैं। बाल्यावस्था, युवावस्था, वृद्धावस्था और सुख दुःखादि के कारण कौन से हैं ?

यह सुन कल्कि जी ने अनन्त ऋषि का स्मरण किया। स्मरण करते ही तीर्थवासी एवम् व्रतधारी मुनि-श्रेष्ठ अनन्त जी वहाँ पर आये। वे मुक्ति के चाहने वाले थे और वे यह भी जानतेथे कि बिना कल्कि भगवान् की दया के मुक्ति नहीं मिल सकती। वे बोलेः—

अनन्त मुनि—आपने मुझे क्यों स्मरण किया है ? आज्ञा दीजिये मुझे क्या करना होगा और मुझे कहाँ जाना होगा ?

कल्कि भगवान्—आपने मेरे सब कर्म देखे हैं, और आपको सब ज्ञात हैं। भाग्य का खण्डन कोई भी नहीं कर सकता और बिना कर्म किये फल की प्राप्ति भी नहीं होती।

दोनों की बातों को राजा लोग कुछ भी न समझ सके। इस लिये वे कल्कि भगवान् से बोलेः—

राजा गण—प्रभो! महर्षि जी ने क्या कहा और आपने उन्हें क्या उत्तर दिया और आप दोनों ने किस विषय पर बात चीत की-यह सब जानने की हम सब को बड़ी अभिलाषा है।

कल्कि भगवान्—हमारी बात चीत का हाल इन्हीं ऋषि से पूँछिये।

यह सुन राजा गण अनन्त ऋषि जी से बोलेः—

राजा गण—हे महर्षि! आपमें और भगवान् कल्कि में जो बात चीत हुई है, उसे हम कुछ न समझ सके। उसे आप कृपा कर हमको समझावें।

अनन्त ऋषि—बहुत पहिले समय में पुरीका नामक नगर में विद्रुम नाम के एक ऋषि रहते थे। वे ही मेरे पिता थे। मेरी माता का नाम सोमा था। वे बड़ी पतिव्रता थीं। जब मेरा जन्म हुआ, तब मैं क्लीब (नपुंसक) था। मुझे देख कर मेरे माता पिता बड़े दुखी हुए। मुझे देख सभी निन्दा करने लगे। मेरे पिता को इतना शोक हुआ कि वे

शिववन में जा महादेव जी की पूजा करने लगे।

मेरे पिता स्तुति करते करते बोलेः–जो शान्त स्वरूप हैं, जो समस्त लोकों के स्वामी हैं, जो प्राणियों के आश्रय हैं, वासुकी जिनके कण्ठ में शोभित है, गङ्गा जी जिनकी जटा में बँधी हैं, उन आनन्द के भण्डार के दाता महादेव जी को नमस्कार है।

मेरे पिता की ऐसी स्तुति सुन महादेव जी बैल पर सवार हो प्रसन्नता पूर्वक प्रकट हुए और उनसे वर माँगने को कहा। मेरे पिता विद्रुम जी बोलेः–

विद्रुम ऋषि–हे देव! हमारा पुत्र क्लीव है, इस लिये मैं बड़ा दुखी हूँ।

महादेव जी ने हँस कर मुझे पुरुष होने का वरदान दिया। फिर जब मेरे पिता घर लौट कर आये; तब मुझे पुरुष देख कर वे बड़े प्रसन्न हुए।

फिर जब मेरी अवस्था बारह वर्ष की हुई: तब मेरे पिता तथा भ्राता ने मेरा बिवाह कर दिया। यज्ञरात मुनि की कन्या से मेरा बिवाह हुआ। मैं थोड़े ही दिनों में उसके वश में हो गया। इसके थोड़े दिनों बाद मेरे पितामाता का परलोक–वास हो गया। मैंने पितामाता का क्रिया–कर्म किया, और बहुत से ब्राह्मणों को भोजन कराया; किन्तु पितामाता के मरने से मुझे बड़ा दुःख हुआ। इससे मैं भगवान् विष्णु की आराधना करने लगा।

मेरे जप, यज्ञ और पूजा से हरि भगवान् प्रसन्न हुए और स्वप्न में मुझसे कहाः—

भगवान् विष्णु—इस संसार में स्नेह, मोह, ममता आदि सब मेरी ही माया है। जिन लोगों में ऐसा ज्ञान है कि ये हमारे पिता हैं, ये हमारी माता हैं, यह हमारी स्त्री है, यह हमारे पति हैं और जिनका मन ऐसी ममता और मोह के कारण व्याकुल रहता है, वे ही मेरी माया के कारण, शोक, दुःख, भय, उद्वेग, जरा, मृत्यु आदिक दुःख भोगते हैं।

मैं जैसे ही यह सुन उनसे कुछ कहना चाहता था कि वे अन्तर्धान हो गये और मेरी नींद टूट गयी। हे राजा गण! फिर मैं पुरीका पुरी को त्याग और अपनी स्त्री को ले, पुरुषोत्तम[1] नामक तीर्थ में चला गया।

वहाँ मैंने एक घर बनवाया और उसीमें रहने लगा। भगवान् विष्णु की माया देखने के लिये वहाँ रह, मैं उनका आराधन करने लगा।

इसी तरह मैं वहाँ बारह वर्ष तक रहा। एक दिन मैं द्वादशी के दिन समुद्र में नहाने गया। ज्यों ही मैंने समुद्र में गोता मारा त्यों ही भयङ्कर लहरों के कारण मुझमें उठने का भी बल न रहा। धीरे धीरे मैं लहरों और हवा के कारण बहते बहते एक द्वीप में जा लगा। वहाँ मैं अचेत पड़ा रहा।

मुझे उस स्थान में पड़ा देख, वृद्धशर्मा नाम का एक ब्राह्मण, मुझे अपने घर ले गया। उसने और उसकी दयालु स्त्री ने

---

[1] पुरुषोत्तम तीर्थ। उड़ीसा देश में ऋषिकुल्या और वैतरिणी नदियों के बीच का स्थान पुरुषोत्तम तीर्थ कहलाता है।

मेरी खूब सेवा शुश्रूशा की, उनकी कृपा से मैं शीघ्र ही आरोग्य हो गया। उस द्वीप से बाहर न जा सकने के कारण मैं वृद्धशर्मा ही के यहाँ रहने लगा।

वृद्धशर्मा ने मुझे पढ़ा लिखा समझ, मेरे साथ अपनी कन्या का विवाह कर दिया। उसका नाम चारुमती था। चारुमती मुझे सदा प्रसन्न रखने लगी। मैं उससे बड़ा प्रसन्न हुआ। वहाँ मेरे जय, विजय, कमल, विमल और बुद्ध नाम के पाँच पुत्र हुए।

वहाँ मैं धनी हो गया, लोग मुझे आदर की दृष्टि से देखने लगे और वहाँ मैं सुख के साथ रहने लगा।

जब मेरा बड़ा पुत्र बुध बड़ा हुआ; तब मुझे उसके विवाह की चिन्ता हुई। धर्मसार नाम के एक ब्राह्मण ने अपनी कन्या के साथ उसका विवाह करने की इच्छा प्रकट की। एक दिन जब मैं विवाह के प्रथम होने वाली एक रीति पूरी करने के लिये समुद्र तट पर गया और जब वहाँ से लौटने लगा, तब मैंने वहाँ स्नान करते हुए अपने कुछ पहिले भाई बन्दों को देखा।

मेरे रूप या शरीर में कुछ भी अदल बदल न हुआ था। सो पुरुषोत्तम-तीर्थ-बासी उन मेरे सम्बन्धियों (नातेदारों) ने मुझे पहिचान लिया और वे मुझसे बोले:-

मेरे सम्बन्धी—हे अनन्त! तुम परम वैष्णव हो। क्या तुमने जल अथवा थल में कोई नवीन वस्तु देखी है जो तुम इस भाँति व्यग्र दिखलायी पड़ते हो। यदि तुमने कुछ देखा हो तो कहो, नहीं तो पूजन करो।

मैं-मुझे कुछ भी नहीं सुनायी दिया। मेरा हृदय बड़ा दुर्बल है।
मुझे भगवान् की माया देखने की इच्छा हुई थी
और अब मैं उनकी माया में फँस गया हूँ। मैं स्नेह
और मोह-जाल में पड़ा हूँ।

इसी तरह मैं खड़ा खड़ा कहता रहा। मैं कौन हूँ? क्या हूँ? मैं उस समय यह कुछ भी न समझ सका। उसी समय मेरी पहिली स्त्री वहाँ आयी और मुझे इस अवस्था में देख रोने लगी। मैं वहाँ हक्का बक्का सा खड़ा रहा।

उसी समय एक परम धार्मिक, पवित्र, धीर और गुणवान् परमहंस वहाँ मुझे समझाने आये। मेरे कुटुम्बियों ने उनकी पूजा की और मुझे समझाने को उनसे कहा।

१२-संसार की माया।

परमहंस आदर पा कर, वहाँ बैठ गये। उनके बैठने पर पुरुषोत्तम-तीर्थ वासी ब्राह्मणों ने उनसे पूँछा:—

पुरुषोत्तम-तीर्थ के ब्राह्मण-हे परमहंस राज! कहिये अनन्त किस प्रकार आरोग्य होगा?

परमहंस जी उनका अभिप्राय समझ गये और मेरी ओर देख कर बोले:—

परमहँस जी-हे अनन्त! अपनी चारुमती, भार्या बुध आदि पाँचो पुत्र, तथा धन और जन से भरे पूरे घर को छोड़ कर तुम यहाँ कब और क्यों आये हो? आज क्या तुम्हारे पुत्र के विवाह का दिन है? आज भी मैंने तुम्हें समुद्र के किनारे घूमते देखा है। वहाँ सब धार्मिक सज्जन तुम्हारा आदर किया करते हैं। किन्तु मैं देखता हूँ कि तुम्हारा हृदय शोक से विह्वल है। मैंने तुम्हें वहाँ सत्तर वर्ष का वृद्ध देखा था पर

तुम यहाँ बीस वर्ष के युवा से दिखलायी पड़ते हो। मैं देखता हूँ यह नारी [मेरी पहिली स्त्री की ओर इशारा कर] तुम्हारी स्त्री और सहायक है; किन्तु मैंने इसे वहाँ कभी नहीं देखा। मैं स्वयं नहीं सोच सकता कि मैं यहाँ कब आया या मुझे यहाँ कौन लाया। तुम क्या वही अनन्त हो ? मैं भी क्या वही भिक्षुक हूँ ? मेरा और तुम्हारा दोनों ही का यहाँ इस तरह मिलना जादू सा मालूम होता है। तुम स्वधर्म-निष्ठ गृहस्थ हो, मैं परमार्थ चिन्ता में तत्पर भिक्षुक ब्राह्मण हूँ। यहाँ पर हम दोनों की बात चीत बालक और पागल की तरह ठीक ठीक नहीं मालूम होती। हे ब्रह्मन् ! मुझे यह जान पड़ता है कि यह सब भगवान् विष्णु की माया है। साधारण लोग इसे नहीं समझ सकते और इसके द्वारा संसार में फँसे रहते हैं। साधारण ज्ञान से इसका भेद समझ में नहीं आ सकता। अद्वैत को जानलेने पर, यह माया भली भाँति समझ में आ जाती है।

वे परमहंस जी मुझसे इतना कह कर, मुनिश्रेष्ठ मार्कण्डे जी से बोलेः—

मुनिश्रेष्ठ–हे मार्कण्डेय जी ! आपसे भविष्य की कथा कहता हूँ उसे सुनो। आपने सुना होगा कि प्रलय हो जाने पर परम पुरुष के साथ ठीक उसी भाँति सबको मोहित करने वाली माया रहती है जिस तरह सदर सड़क पर सबका मन मोहने वाली वेश्या

रहती है। यही माया त्रिलोकी में रह उसको स्थित करती है, यही माया तमोगुण रूप हो सबको इस झूठे संसार में चलाती है और यही माया कभी नाश न होने वाले दुःख का कारण है। इस माया का नाश कोई नहीं कर सकता। प्रलय काल में जब त्रिलोकी का लय हो जाता है, तब परब्रह्म सृष्टि रचते हैं। फिर वे प्रकृति और पुरुष का रूप धारण कर महत्तत्व को उत्पन्न करते हैं। महत्तत्व से अहङ्कार तत्व उत्पन्न होता है। अहङ्कार तत्व तीन रूपों में अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु और महेश में विभक्त होता है। फिर ये तीनों सारे संसार को रचते हैं।

इसके बाद देव, दानव, मनुष्य आदि सब जीवों की जो इस संसार में विद्यमान् हैं उत्पत्ति होती है। परमात्मा की माया से ढके रहने के कारण यह सारे जीव संसार से इस तरह बँधे रहते हैं कि वे अपने उद्धार का कुछ भी उपाय नहीं सोच पाते। कैसा आश्चर्य है! माया कैसी बलवान् है। ब्रह्मा आदि देवता भी इस माया से इस तरह बँधे रहते हैं जिस तरह डोरी से नाथे हुए बैल बँधे रहते हैं। जो ऋषि इस माया से छूटने का उपाय सोचते रहते हैं, असल में वे ही सच्चे ज्ञानी हैं और उन्हीं-का जीवन सफल है।

यह सुन कर सारे राजा प्रसन्न हुए और अनन्त ऋषि से आगे का हाल पूँछने लगे।

अनन्त ऋषि—फिर मैंने बन में जा तप करना आरम्भ किया, परन्तु मैं किसी तरह भी इन्द्रिय और मन को वस

मैं न कर सका। जब मैं परब्रह्म का ध्यान करूँ तभी मुझे स्त्री, पुत्र, घर आदि की बातें याद आ जाया करें और मेरे ध्यान में विघ्न होने लगे। फिर मैंने इन्द्रियों का ही नाश कर देना चाहा। मैंने विचारा कि इन्द्रियों के नाश हो जाने पर मैं मन को अपने वस में रख सकूँगा। फिर मैंने सोचा कि जो बहिरे अन्धे हैं वे भी अपने मन पर अधिकार नहीं कर सकते और इन्द्रिय नष्ट करने तथा मर्मस्थान में पीड़ा होने पर मर जाने का भी डर है। इस कारण मैंने अपने इस विचार को भी छोड़ दिया। फिर मैं केवल भगवान् विष्णु का स्मरण कर के रहने लगा। उन परमहँस जी ने मुझसे कहा था-"हरि-भक्ति ही से द्वैत अद्वैत का ज्ञान होता है। हरि-भक्ति ही से आनन्द मिलता है और हरिभक्ति ही से मोक्ष मिलती है। तुम कल्कि भगवान् का दर्शन कर मोक्ष पाओगे।" तब से मैं कलि का नाश करने वाले कल्कि भगवान् का ध्यान कर रहने लगा। आज बड़े भाग्य से मैंने रूपहीन ईश्वर के रूप का दर्शन किया, पदहीन ईश्वर के चरण कमल को स्पर्श कर मैं कृतार्थ हुआ और वाणी रहित ईश्वर के सुधामय वचन सुन, मेरा जीवन सफल हुआ।

यह कह कर हर्षित हृदय अनन्त मुनि, कल्कि भगवान् को नमस्कार कर अपने स्थान को चले गये।

१३—कीकटपुर-गमन।

अनन्त ऋषि और सारे राजाओं के चले जाने पर कल्कि जी ने सम्भल जाने का विचार किया। जब देवराज इन्द्र ने इसे सुना तब उन्होंने विश्वकर्म्मा को बुला कर कहा:—

इन्द्र—विश्वकर्मा! तुम सम्भल जाओ और वहाँ जा कर अपनी चतुराई से सुन्दर सुन्दर महल भगवान् कल्कि जी के लिये बनाओ। महलों के आस पास रमणीय बगीचे बनाओ। महलों में वैदूर्य और स्फटिक मणि के खम्भे और उनमें तरह तरह के मणि लगाओ। जाओ, वहाँ तुम कार्य करने में किसी तरह की त्रुटि न करना।

यह सुन विश्वकर्म्मा सम्भल गाँव की ओर चला, और वहाँ पहुँच कर उसने बहुत से महल और बगीचे बना कर तयार किये।

इधर कल्कि जी सेना और पद्मा समेत सिंहलद्वीप की राजधानी कारुमती नगरी से सम्भल ग्राम की ओर चले। राजा बृहद्रथ और रानी कौमुदी पद्मा के स्नेह से विह्वल हो रोने लगीं

और उन्होंने विदा होते समय भगवान् कल्कि को बहुत सी सेना, धन, दास और दासियाँ दीं।

वहाँ से चल कर वे समुद्र के किनारे आये और समुद्र पार कर के वे सब सम्भल की ओर चले। समुद्र को पार कर भगवान् ने तोते से कहा:—

भगवान् कल्कि जी—तुम सम्भल ग्राम की ओर जाओ। वहाँ हमारे लिये इन्द्र की आज्ञा से विश्वकर्म्मा ने तरह तरह के महल बनाये हैं। तुम वहाँ जा कर हमारे माता पिता और सम्बन्धियों से हमारे कुशल समाचार कहना और उनसे हमारे विवाह की भी ख़बर कह देना। तुम आगे चलो, मैं सेना के साथ पीछे आता हूँ।

भगवान् की आज्ञा पा वह तोता वहाँ से उड़ा और सम्भल पहुँचा। वहाँ उसने सूर्य की किरनों से चमकते, महलों के कलसों को दूर से देखा। महलों के पास पहुँच कर उसने उन रमणीय बाग़ों को देखा जिन्हें देख कर वह बड़ा प्रसन्न हुआ। अन्त में वह विष्णुयश जी के पास गया और उनसे उसने सारे समाचार कहे। फिर वह विशाखयूप राजा के पास गया और उससे भी सब समाचार कहा।

विशाखयूप राजा ने हरि का आगमन सुन, सारे नगर को सजाया और पूजा की सामग्री ले वह भगवान् को लेने नगर से बाहर गया।

भगवान् कल्कि सेना समेत नगर के बाहर सब से मिले। माता पिता को प्रणाम कर वे नगर में घुसे।

वहाँ वे आनन्द के साथ बहुत दिन रहे। उन्हीं दिनों कवि, प्राज्ञ और भगवान् कल्कि के, दो दो पुत्र हुए।

इस प्रकार कल्कि जी परिवार समेत सुख से रहने लगे।

उन्हीं दिनों उनके पिता ने अश्वमेध यज्ञ करने की इच्छा की। उनकी यह इच्छा जान कर भगवान् कल्कि बोले:—

भगवान्कल्कि—मैं दिक्पालों को जीत कर और धन इकट्ठा कर आपसे अश्वमेध करवाऊँगा। इस समय मैं दिग्विजय करने जाता हूँ।

इतना कह कर भगवान् कल्कि सेना समेत कीकटपुर की ओर चले। यह कीकटपुर बौद्धों का प्रधान स्थान था। यहाँ के निवासी वैदिक धर्म के विरुद्ध, पितृ और देवता को न मानने वाले थे। कल्कि जी का युद्ध करने के लिये आना सुन उस नगर का प्रधान जिन दो अक्षौहिणी सेना ले नगर से बाहर आया।

बहुत से हाथी, घोड़े और योद्धाओं से रणभूमि भर गयी। दोनों ओर की झण्डियाँ दूर से दिखलायी पड़ने लगीं।
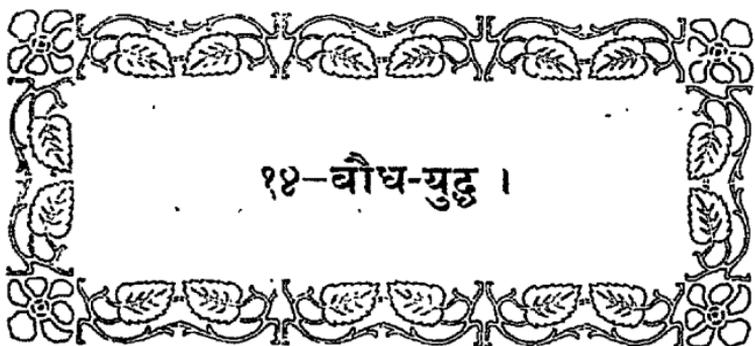
१४—बौध-युद्ध ।

इसके बाद भगवान् कल्कि बौद्धों की सेना पर आक्रमण (धावा) करने चले । उस समय बौद्ध-सेना-नायक से कल्कि जी बोलेः—

भगवान् कल्कि—अरे बौद्ध ! तुम लोग रण से न भागो और वीर की तरह युद्ध करो ।

यह सुन बौद्ध-सेना-पति जिन तलवार ले, कल्कि जी से युद्ध करने दौड़ा । वह बड़ा वीर और चतुर योद्धा था । वह इस तरह लड़ा कि उसकी लड़ाई देख देवता भी आश्चर्य करने लगे। उस समय जिन ने एक शूल से कल्कि जी का मस्तक भेद दिया जिससे वे बेहोश होगये। कल्कि जी को बेहोश देख जिन उनको मारने दौड़ा। यह देख विशाखयूप राजा ने उन्हें अपने रथ पर रख लिया। उसी समय कल्कि जी की मूर्च्छा दूर हुई और वे रथ से कूद कर जिन से लड़ने चले ।

महाबली कल्कि बौद्ध सेना में कूद कर घूमने लगे और घूम घूम कर बौद्धों का नाश करने लगे ।

बहुत से तो रथों और हाथी घोड़ों की चपेट में आकर मर गये। बहुतों को गर्ग, भर्ग्य, कवि और पाद्द ने मारा। फिर कल्कि जी जिनसे बोलेः—

जिन—रे दुर्मति! भागता क्यों है? मुझको शुभाशुभ का फल दाता, अदृष्ट स्वरूप समझ। मेरे सामने आ, अभी हाल ही तू मेरे बाणों से परलोक गमन कर और अपने कुटुम्बियों को अन्तिम बार देख ले।

भगवान् कल्कि के ऐसे वचन सुन बलवान् बौद्ध सेना नायक जिन बोलाः—

जिन—अदृष्ट कभी प्रत्यक्ष नहीं होता। हम सब (बौद्ध) प्रत्यक्ष के सिवा और किसी को नहीं मानते। हमारे शास्त्रों में लिखा है—"अदृष्ट हमारे द्वारा नष्ट होगा।" यद्यपि तुम देवता हो, तथापि हम सब तुम्हारे सामने ही हैं। यदि तुम मुझे मार डालोगे तो क्या बौद्ध तुम्हें छोड़ देंगे? लो अब सम्हलो मैं तुम पर आक्रमण करता हूँ।

इतना कह कर जिन ने भगवान् पर तीर चलाये। पर वे कल्कि जी का कुछ न कर सके। उसने भगवान् पर तरह तरह के अस्त्र चलाये, पर वे सब व्यर्थ गये। फिर कल्कि जी जिनसे लड़ने लगे। उन्होंने जिन को सवारी से गिरा दिया और वे उसकी छाती पर चढ़ बैठे। नीचे जाकर जिन ने भगवान् कल्कि का एक हाथ अपने एक हाथ से और दूसरे हाथ से उनके बाल पकड़ लिये। फिर वे दोनों हथियारों को छोड़ कुश्ती लड़ने लगे। जिस तरह उन्मत्त हाथी ताल के पेड़ को तोड़ डालता है उसी तरह भगवान् कल्कि ने लात मार जिन की कमर तोड़ डाली और उसे इस ज़ोर से पटका कि जिन के प्राण निकल गये।

अपने सेनापति की मृत्यु देख बौद्धों की सेना में हाहाकार मच गया। अपने बड़े भाई को मरा देख उसका छोटा भाई शुद्धोदन कल्कि जी से लड़ने चला। किन्तु बीच ही में महावीर कवि ने उसे ललकारा। शुद्धोदन उस समय पैदल था और गदा लिये था। यह देख कवि ने भी अपनी सवारी छोड़ दी और वह गदा लेकर उससे लड़ने चला। दोनों महावीर लड़ने लगे। थोड़ी देर बाद कवि ने शुद्धोदन की छाती पर ज़ोर से एक गदा मारी। शुद्धोदन उसकी चोट से गिर पड़ा,पर फिर उठ कर उस ने कवि पर गदा चलायी। कवि इस आघात से गिरा तो नहीं; पर उसका सिर चकरा गया और वह वहीं ठड़ा रह गया।

भगवान् कल्कि की सेना को बहुत देख कर, वह [शुद्धोदन] म्लेच्छ सेना और मायादेवी को लाने के लिये गया। थोड़ी ही देर में माया के कारण भगवान् कल्कि की सेना निस्तेज हो गयी और धीमी पड़ गयी। उस समय बौद्ध और म्लेच्छ कल्कि भगवान् की सेना को मारने लगे। यह हाल देख भगवान् कल्कि आगे आये और उन्होंने माया का नाश कर, अपनी सेना को उत्साहित करना आरम्भ किया; जिससे उनकी सेना फिर वीरता से लड़ने लगी।

इधर बौद्ध यह हाल देख आश्चर्य करने लगे और हका बका से रह गये।

तृतीय अंश ।

१५-म्लेच्छ-विनाश ।

उस समय भगवान् कल्कि कन्धे पर तरकस लगा, सुन्दर धनुष हाथ में ले, कवच [जिरहबख्तर] पहिन और घोड़े पर सवार हो बौद्ध और म्लेच्छ सेना में घुसे ।

सेना में घुस कर, वे अपने पैने तीरों से म्लेच्छों को मारने लगे। उन्हींके साथ विशाखयूप, कवि, प्राज्ञ, सुमन्त, गर्ग, भर्ग्य और विशाल आदि ने मार काट मचा दी।

बौद्ध और म्लेच्छ सेनाओं के सेनापति कपोतरोमा, काकाक्ष काककृष्ण, शुद्धोदन आदि उनसे युद्ध करने लगे।

लड़ाई का मैदान भयानक दिखायी पड़ने लगा। इतना लोहू बहा कि लोहू की धारा सी बहने लगी। किसी का हाथ कट गया, किसी का पैर कट गया, किसी की आँख फूट गयी, किसी की नाक जाती रही और किसी का कान कट गया। कोई हाय हाय कर रहा है, कोई मारो मारो चिल्ला रहा है, कोई

प्यास के मारे पानी पानी की रट लगाये है। इसी तरह वह रण-भूमि भयानक हो गयी।

कादर लोग गेरुए कपड़े पहिन, नकली संन्यासी बन, जान बचाने के लिये सियारों की तरह भागने लगे। इसी तरह म्लेच्छ सेना में कोई भी ऐसा न रह गया जिसके चोट न लगी हो।

म्लेच्छ और बौद्धों के नाश होजाने पर उनकी स्त्रियां कल्कि भगवान् से लड़ने आयीं। यह देख कल्कि जी उनसे बोले:—

भगवान् कल्कि जी-हे अबलाओ! पुरुषों को स्त्री से युद्ध करने का अधिकार नहीं है। जो कमज़ोर है उसे बलवान नहीं मार सकते। स्त्रियाँ कमज़ोर होती हैं और पुरुष बलवान। फिर तुम्हीं कहो पुरुष तुमसे किस तरह युद्ध कर सकते हैं। तुम सब मेरी सलाह मानो और घर लौट जाओ।

यह सुन वे स्त्रियाँ भगवान् से बोलीं:—

म्लेच्छ और बौद्ध स्त्रियाँ-जब आपने हमारे पतियों को मार डाला है,तब आपने हमें भी मार डाला;क्योंकि पति के जीवन ही से स्त्री का जीवन है।

यह कह कर वे कल्कि भगवान् पर हथियार छोड़ने लगीं। किन्तु उनके हाथ से एक भी अस्त्र न चला। उस समय सब अस्त्रों के देवता उनसे कहने लगे:-

अस्त्रदेव-हे स्त्रियों! जिनसे हमने तेज पाया है और जिस तेज से हममें मारने की शक्ति [ताकत] है; वे यही कल्कि भगवान् हैं। हम इन्हीं ईश्वर की आज्ञा से कार्य किया करते हैं। रूप, रस, गन्ध स्पर्श

और शब्द, ये पाँच भूत इन्हीं भगवान् से उत्पन्न हो अपना अपना कार्य किया करते हैं । इन्हींकी आज्ञा से परम प्रकृति सारे ब्रह्माण्ड को उत्पन्न किया करती है । सृष्टि, स्थित. प्रलय और जगत के प्रपञ्च सब इन्हींकी माया हैं, यही सब के आदि और अन्त हैं। "यह मेरे भाई हैं, यह मेरे पति हैं" यह मोह इन्हीं भगवान् की माया है। जो सिर्फ-स्नेह और मोह के वश में होकर, इस संसार में आया जाया करते हैं, जो राग द्वेष के कारण भगवान् का ध्यान नहीं करते, वे ही इस झूँठे संसार को सच्चा समझते हैं । काल [समय] मृत्यु, यम, देवता आदि इन्हींकी माया से बने हैं; यही भगवान् अपनी माया से एक से अनेक हो गये हैं । हे स्त्रियों! हम शस्त्र नहीं हैं । हममें किसी को मारने की शक्ति नहीं है । यही परमात्मा शस्त्र हैं और यही प्रहार कर सक्ते हैं । जैसे दैत्य-पति हिरण्यकशिपु हमसे परमात्मा के भक्त प्रहलाद को मारने को कहता था, तब जिस तरह हम इनकी [कल्कि भगवान् की] माया से उन्हें नहीं मार सके, उसी तरह हममें इस समय कल्कि भगवान् की इच्छानुसार, मारने की शक्ति नहीं है । इनकी इच्छा के विरुद्ध कोई भी, कोई कार्य नहीं कर सकता । इन्होंने मनुष्य को मन माना काम करने का अधिकार दिया है; पर उसका फल देना अपने अधिकार में रखा है ।

अश्वदेव की ये बातें सुन म्लेच्छ और बौद्ध स्त्रियां बड़ी चकित हुईं। उनके ज्ञाननेत्र खुल गये और वे सब भगवान् कल्कि जी की शरण में आयीं।

भगवान कल्कि ने उन्हें कर्मयोग, ज्ञानयोग आदि विषय कह सुनाये। फिर वे स्त्रियाँ कल्कि जी के उपदेश से उनकी आराधना करने लगीं।

इस प्रकार भगवान कल्कि जी, भयङ्कर युद्ध करके, बौद्ध और म्लेच्छों का नाश कर, उनकी स्त्रियों को मुक्ति पद दे, बौद्ध और म्लेच्छों को, ज्योतिर्भज स्थान में भेज कर और कीकट नगर में विजयी हो, सुशोभित हुए।

१६–कुथोदरी-वध।

बौद्धों और म्लेच्छों का नाश कर, भगवान् कल्कि कीकटपुर से धन और रत्न ले, सम्भल को लौटे। राह में वे चक्रतीर्थ में उतरे और वहाँ स्नान किया। एक दिन जब कल्कि जी अपने बन्धु बान्धवों के साथ वहाँ पर बैठे हुए थे; तब वहाँ पर कुछ मुनि आये। वे सब डरे हुए दीख पड़ते थे और भगवान् के पास आ कर बोले,–"हे भगवन्! रक्षा करो।"

भगवान् कल्कि ने इन बाल[1]खिल्यादि ऋषियों के ऐसे वचन सुन, उनसे नम्रता पूर्वक कहा:—

भगवान् कल्कि–हे मुनिवरो, आप लोग कहाँ से आये हैं और क्यों इतने डरे हुए हैं? कहिये आपको किसने कष्ट दिया है? आपको कष्ट देने वाला चाहे स्वयं इन्द्र ही क्यों न हो, मैं उसे अवश्य दण्ड दूँगा।

भगवान् कल्कि के ऐसे ढाढ़स दिलाने वाले वचन सुन वे सब ऋषि कहने लगे:—

---

१ बालखिल्य। क्रतु ऋषि का विवाह पुलस्त्य ऋषि की कन्या से हुआ था। उनसे इन बालखिल्य ऋषियों का जन्म हुआ है, संख्या में ये ६0000 हैं। इनका शरीर केवल अंगूठे के पोरुए इतना है।

वाल खिल्यादि ऋषि–हे भगवन् ! सुनिये । कुम्भकर्ण के पत्र निकुम्भ की एक लड़की है । वह ताड़ के पेड़ के समान ऊँची है । उसका नाम कुथोदरी है। वह राक्षसी कालकञ्ज राक्षस जैसी है। उसके एक पुत्र है जिसका नाम विकञ्ज है । वह हिमालय के ऊपर बैठी अपने पुत्र को दूध पिला रही है। हे देव ! हम लोग उसके उत्पात से घबड़ा कर, यहाँ आपके पास रक्षा के लिये आये हैं ।

वालखिल्यादि ऋषियों के ऐसे विनीति वचन सुन, भगवान् कल्कि ने अपने सेनानायकों की सेना तयार कर के,उन्हें हिमालय चलने की आज्ञा दी ।

भगवान् स्वयं उस सेना के साथ चले । जब वे हिमालय पर्वत पर पहुँचे, तव उन्होंने उसे मारने की तयारी की। जब वे उसे मारने चले: तब रास्ते में उन्हें दूध की एक पतली धार दीख पड़ी। भगवान् कल्कि जी के सेवकों ने अचरज से पूँछा:–

कल्कि-सेवक–प्रभो ! कृपा कर यह तो बतलाइये, यह दूध की धारा कहाँ से आरही है ?

वालखिल्यादि ऋषि–इस दूध को धारा में कुथोदरी राक्षसी के स्तनों का दूध है। जब वह पुत्र को एक स्तन का दूध पिलाने लगती है;तब दूसरे स्तन का दूध भी स्नेह-वश निकलने लगता है। उसके स्तनों से इतना दूध निकलता है कि उसकी ऐसी धार बन जाती है।

थोड़ी दूर चल कर सब ने देखा कि पहाड़ की एक चोटी पर कुथोदरी राक्षसी अपने पुत्र को दूध पिला रही है। उसका

विकट स्वरूप और भीम आकार देख कर, सिपाही घबड़ा गये। यह देख भगवान् कल्कि जी बोले:—

भगवान् कल्कि जी—सब पैदल सिपाही इस पहाड़ी पर मोरचा बाँध कर ठहरें, और सवार मेरे साथ चलें। मैं इस पर तलवार, बाण, शूल और बर्छी चलाऊँगा।

यह कह कर भगवान कल्कि जी आगे बढ़ कर, राक्षसी पर, बाण चलाने लगे। रक्षसी कुथोदरी मारे क्रोध के चिल्ला उठी। उसका भयङ्कर गर्जन सुन कर, सारे सैनिक घबड़ा गये। फिर भगवान् कल्कि उससे लड़ने लगे और राक्षसी उन पर प्रहार करने लगी। अन्त में कुथोदरी गिर कर मर गयी।

अपनी माता को मरा देख, पाँच वर्ष का बालक विङ्कल कल्कि की सेना में मारे क्रोध के उपद्रव मचाने लगा। अन्त में वह भी मारा गया।

वहाँ से भगवान् कल्कि हरिद्वार में आये। उन्होंने सवेरे उठ के देखा मुनिगण उन्हें देखने के लिये उत्सुक हैं।

एक दिन जब वे अपने डेरे, पिण्डारक वन में बैठे थे; तब बहुत से ऋषियों ने आकर उन्हें प्रणाम किया और वे उनकी स्तुति करने लगे।

१७—श्रीराम-चरित्र ।

इन सब आये हुए मुनियों को देख कर, भगवान् कल्कि ने उठकर इन सब की पूजा की और हाथ जोड़ कर बोलेः—

भगवान् कल्कि जी—हे महाभाग ! आप लोग कौन हैं ? आपका तेज भगवान् सूर्य्य के तेज के समान है, आप तीनों लोकों की भलाई करने में लगे रहते हैं, आप सदा तीर्थों में घूमते रहते हैं । आज हमारा भाग्य खुला है; क्योंकि आज आप जैसे महानुभाव हमारे यहाँ पधारे हैं । आप लोगों की कृपा ही से हम विजयी और यशस्वी हो सकते हैं ।

फिर वामदेव, अत्रि, वशिष्ट, गालव, भृगु, पराशर, नारद, अश्वत्थामा, परशुराम, कृपाचार्य, त्रित, दुर्वासा, देवल, कण्व, वेदप्रमिति, अंगिरा आदि सारे मुनिगण—चन्द्र और सूर्यवंशी महाराज मरु और देवापि को, जो तपस्या कर रहे थे, सामने देख कर बोलेः—

मुनि—हे जगन्नाथ! घट घट व्यापी! सृष्टि के बनाने वाले! हम पर प्रसन्न हो। हे पद्मनाथ! तुम्हींमें संसार के सब गुणकर्म विद्यमान हैं। देवता गण भी तुम्हारी वन्दना किया करते हैं। हे देवादिदेव! आप हम पर प्रसन्न हों।

भगवान् कल्कि महाराज मरु और देवापि की ओर देख कर बोलेः—

भगवान् कल्कि जी—हे मुनिगण! तुम्हारे सामने ये दो महाबली महापराक्रमी और तपस्वी व्यक्ति कौन हैं? ये गङ्गा जी का जप किस लिये करते हैं और इनके नाम क्या हैं?

भगवान् कल्कि के ऐसे वचन सुन दोनों क्षत्रिय-कुल-भूषण बड़े प्रसन्न हुए और अपना नाम बतला के अपने अपने वंश की कीर्त्ति कहने लगे। पहिले महाराज मरु बोलेः—

महाराज मरु—हे देवादिदेव! आप सर्वव्यापी और अन्तर्यामी हैं। आपतो सब कुछ जानते हैं; तब भी मैं आपकी आज्ञा से अपना वर्णन करता हूँ। सुनिये-

आपकी नाभि से ब्रह्माजी का जन्म हुआ था। ब्रह्मा के पुत्र मरीचि, मरीचि के पुत्र मनु और मनु के महाविक्रमशाली पुत्र इक्ष्वाकु जी हुए। इक्ष्वाकु के पुत्र युवनाश्व, युवनाश्व के पुत्र मान्धाता, मान्धाता के पुत्र पुरुकुत्स, पुरुकुत्स के पुत्र महावीर अनरण्य हुए। अनरण्य के पुत्र त्रसदस्यु, त्रसदस्यु के हर्यश्व और हर्यश्व के पुत्र अरुण हुए। अरुण के पुत्र महाराज त्रिशंकु. त्रिशंकु के पुत्र सत्यवादी

महाराज हरिश्चन्द्र हुए । हरिश्चन्द्र के पुत्र हरित, हरित के पुत्र भरुक, भरुक के पुत्र वृक, वृक के असमञ्जा, और असमञ्जा के पुत्र अंशुमान हुए। अंशुमान के पुत्र महाराज दिलीप, दिलीप के महाराज भगीरथ हुए। यह गङ्गा जी को लाये थे। इसी कारण गङ्गा जी को भागीरथी कहते हैं। आपके चरणों से उत्पन्न होने के कारण सांसारिक जन, इनकी स्तुति, पूजा और जप करते हैं। भगीरथ के पुत्र नाभ, नाभ के पुत्र सिन्धुद्वीप, और सिन्धुद्वीप के पुत्र अयुतायु हुए। अयुतायु के पुत्र ऋतुपर्ण ऋतुपर्ण के पुत्र सुदास, सुदास के पुत्र सौदास और सौदास के पुत्र अश्मक हुए। अश्मक के पुत्र दशरथ, दशरथ के पुत्र एडविग: एडविड के पुत्र विश्वसह, विश्वसह के पुत्र खट्वाङ्ग, खट्वाङ्ग के पुत्र दीर्घबाहु हुए। दीर्घबाहु के पुत्र रघु, रघु के अज अज के पुत्र दशरथ और दशरथ जी के साक्षात् हरि भगवान् ने रामचन्द्र नाम धर अवतार लिया।

ऐसा कौन है जो भगवान् रामचन्द्र जी के गुणों का बखान कर सके ? तब भी जहाँ तक होसकेगा तहाँ तक मैं संक्षेप में उनके गुणों का बखान करता हूँ ।

जब संसार में राक्षसों के उपद्रव से लोगों का पूजन, जप, तप और धर्म कर्म बन्द हुआ, तब ब्रह्मादि देवताओं की प्रार्थना से आपने ही जन्म लिया था। शैशवावस्था में आपने बहुत से राक्षसों

को मार कर गाधिनन्दन विश्वामित्र के यज्ञ का रक्षा की थी।

शेष भगवान् के अवतार, लक्ष्मण जी के साथ, महर्षि विश्वामित्र की आज्ञा से, आप महाराज जनक के यहाँ गये। जनक जी ने आदर से आपकी पूजा की। आपको योग्य वर देख कर राजा जनक ने जानकी जी का विवाह आपसे कर देना चाहा। इस लिये जब महादेव जी का भारी धनुष आपके सामने लाया गया, तब आपने सहज ही में उसके दो टुकड़े कर डाले।

फिर जनक जी ने अपनी प्यारी पुत्री जानकी जी का विवाह आपके साथ कर दिया और आपके तीनों भाइयों के साथ अपनी भतीजियों का विवाह कर दिया। फिर आप जब विवाह कर अयोध्या जी को लौटने लगे, तब शिवधनु भङ्ग होने के कारण महर्षि परशुराम जी आप पर क्रोधित हुए। उनको समझा कर आप अयोध्या जी आये।

फिर राजा दशरथ जी ने आपको अयोध्या का सिंहासन देना चाहा। इसे सब ने पसन्द किया। आपके राज-तिलक की तयारियां भी होने लगीं। पर कैकेयी ने बीच में विघ्न डाला और आपको राजसिंहासन के बदले चौदह वर्ष का बनवास दिलाया।

आप पिता की आज्ञा मान, भाई लक्ष्मण और स्त्री सीता को साथ ले बन को गये। आपके बदन

पर, निषादराज गुह्य के स्थान में, वल्कल वस्त्र शोभित हुए ।

आपके वियोग से आपके पिता का देहान्त हो गया । जब भरत जी ने आपके वनोवास का हाल सुना, तब आपको लौटा ले जाने के लिये वे आपके पास वन में आये । किन्तु आप पिता ही की आज्ञा पर दृढ़ रहे और आपने भरत जी को राजकाज करने के लिये अयोध्याजी लौटा दिया ।

फिर आप बहुत से ऋषियों से मिल कर, पञ्च-वटी में रहने लगे । वहाँ रावण की बहिन शूपनखा राक्षसी के आपने नाक कान कटवा दिये ।

जब सूपनखा क्रोधित हो अपने भाई खरदूषण को आप पर चढ़ा लायी, तब आपने उसको चौदह हज़ार सेना समेत मार डाला ।

फिर वह अपने भाई रावण के पास गयी और उसे अपना बदला लेने के लिये उसकाया । वह मारीच के पास गया और उसे सोने का हिरन बनाकर रामचन्द्र जी के पास भेजा । सीता जी उसे देख कर उस पर मोहित होगयीं और उसकी खाल लेनी चाही । तब आप और लक्ष्मण उसे मारने गये और मार लाये । जब आप माया के मृग मारीच को मारने गये, तब रावण सीता जी को हर ले गया । जब आपने लौट कर सीता को न देखा तब आप उनकी खोज में लक्ष्मण जी के साथ पहाड़, जङ्गल आदि में घूमने लगे । घूमते घूमते आपने रास्ते में

जटायु को अधमरा पड़ा देखा । उससे आपने रावण द्वारा सीता हरण सुना । उसका दाह कर्म कर आप आगे बढ़े ।

फिर आपने सुग्रीव के साथ मित्रता की। हनुमान जी और सुग्रीव की प्रार्थना से आपने सात तालों को वेध कर वालि को मारा । फिर आपने सुग्रीव को वानरों का राजा बनाया ।

इसके बाद हनुमान जानकी जी को ढूंढ़ते ढूंढ़ते जटायु के भाई संपात के कहने से लङ्का को गये । वहाँ जानकी जी की ख़बर ले, लङ्का को जला और राक्षसों की सेना को रावण के पुत्र अक्षयकुमार के साथ मार कर, वे आपके पास आये ।

हनुमान जी के मुँह से जानकी जी का लङ्का में होना सुन, आप वानरों की सेना के साथ, समुद्र पर पुल बांध कर लङ्का में गये । वहाँ वानरों ने रावण के महल आदि ढहा दिये ।

फिर लक्ष्मण जी, हनुमान जी, सुग्रीव, नल, अङ्गद, जाम्बवन्त आदि महाबली वीरों को साथ ले कर आप रावण के सेवक और देवताओं के वैरी राक्षसों का संहार करने लगे ।

महाबलवान् वीर लक्ष्मण जी ने रावण के पुत्र मेघनाद का बध किया । आपने युद्ध में निकुम्भ, मकराक्ष और विकटार आदि राक्षस सेनापतियों को मार डाला । इसके पहिले आपने कुम्भकर्ण को मार डाला था ।

फिर रावण स्वयं आपसे लड़ने आया। हज़ारों रथ, घोड़े, पैदल, हाथी आदि उसके साथ थे। उसने दिव्यास्त्रों से लड़ना आरम्भ किया।

राम और रावण के बाणों से आकाश में अंधेरा सा छागया। बाणों के टकराने से आग की चिनगारियां निकलने लगीं। धनुष की टङ्कार से ऐसा मालूम होने लगा कि मानो बादल गरज रहे हैं।

फिर भगवान् रामचन्द्र जी के बाणों से बिधकर रावण मुर्दा होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। रावण के मारे जाने पर हनुमान जी ने जानकी जी को अशोक वाटिका से ला, और उनकी अग्नि परीक्षा ले, रामचन्द्र जी के समर्पण किया।

रामचन्द्र जी ने विभीषण को लङ्का का राजा बनाया, और सीता जी, लक्ष्मण जी और बानरी सेना के साथ वे पुष्पक विमान पर चढ़, अयोध्या जी आये।

भरत जी और सारी प्रजा की प्रार्थना, और गुरु वशिष्ठ और भ्राताओं की आज्ञा तथा मंत्रियों के अनुरोध से वे अयोध्या के सिंहासन पर बैठे।

उनके समय में चारों वर्ण अपने अपने धर्म पर दृढ़ थे। चोरों का नाम निशान भी न रह गया था। उनके प्रताप से सिंह और बकरी एक घाट पर पानी पीते थे। उनका राज्य ऐसा था कि जब कभी किसी अच्छे राज्य की उपमा देनी होती है, तब उस राज्य को "राम-राज्य" कहते हैं।

इसी तरह भगवान् रामचन्द्र जी ने बहुत दिनों तक राज्य किया । इसी बीच में उन्होंने तीन अश्व-मेध यज्ञ किये ।

इसके बाद किसी कारण से उन्होंने सीता जी को वन में छोड़ दिया । जब वाल्मीकि जी ने उन्हें वन में रोते हुए देखा: तब वे उन्हें अपने आश्रम में ले गये ।

सीता जी उस समय गर्भवती थीं । सो महर्षि वाल्मीकि जी के आश्रम में उनके कुश और लव नाम के दो महा पराक्रमशाली पुत्र हुए । एक बार रामचन्द्र जी के अश्वमेध यज्ञ के समय इन्होंने वहाँ जाकर वाल्मीकि जी की बनायी रामायण का गान किया । बालकों का गान सुन भगवान् राम-चन्द्र जी बड़े प्रसन्न हुए । पूँछने पर सब भेद मालूम हुआ । वाल्मीकि जी ने सी [illegible] जी को लेने के लिये रामचन्द्र जी से अनुरोध किया ।

यह सुन रामचन्द्र जी ने सीता जी से अपनी पवित्रता दिखलाने के लिये अग्नि में प्रवेश करने को कह [illegible] मचन्द्र जी के ऐसे क्रूर वचन सुन, वे अपनी माता पृथ्वी में समा गयीं ।

सारी सभा हाहाकार करने लगी । रामचन्द्र जी अपनी प्रजा समेत स्वर्ग को चले गये ।

---

१८ चन्द्र-वंश।

महाराज मरु कहने लगेः—

श्री रामचन्द्र जी के पुत्र कुश, कुश के पुत्र अतिथि, अतिथि के पुत्र निषध, निषध के पुत्र नभ, नभ के पुत्र पुण्डरीक, और पुण्डरीक के पुत्र क्षेमधन्वा हुए।

क्षेमधन्वा के पुत्र देवानीक, देवानीक के पुत्र हीन, हीन के पुत्र पारिपात्र, पारिपात्र के पुत्र बलाहक, बलाहक के अर्क, अर्क के पुत्र रजनाभ हुए।

रजनाभ के पुत्र द [illegible] खगण के पुत्र विधृत विधृत के पुत्र हिरण्यन[illegible], हिरण्यनाभ के पुत्र पुष्य, पुष्य के पुत्र ध्रुव, ध्रुव के पुत्र स्यन्दन और स्यन्दन के पुत्र अग्निवर्ण हुए।

अग्निवर्ण के पुत्र शीघ्र। यही महा पराक्रमी बुद्धिमान शीघ्र महाराज मेरे पिता हैं। मेरा नाम मरु है। मुझे कोई कोई बुध और सुमित्र भी कहते हैं।

इतने दिनों तक मैं कलापगांव में रह कर तप किया करता था। महर्षि व्यास जी से आपके अवतार का हाल सुन मैं वहुत दिनों से आपकी राह देख रहा था। आप परमात्मा हैं। आपके दर्शन से ही करोड़ों जन्म के पाप छूट जाते हैं। उसके साथ ही साथ मनोकामना पूर्ण होजाती है।

इतना कह कर सूर्यवंश के महाविक्रमशाली राजर्षि महाराज मरुचुप हो गये। फिर भगवान् कल्कि बोले:—

भगवान् कल्कि जी—आपकी वंशावली से मुझे मालूम हुआ कि आप पवित्र सूर्यवंश में उत्पन्न हुए हैं; किन्तु आप के साथ यह दूसरे प्रभावशाली महात्मा कौन हैं?

भगवान् कल्कि के ऐसे मधुर वचन सुन स्वयं देवापि कहने लगे।

महाराज देवापि—प्रलय के अन्त में आपकी नाभि के कमल से ब्रह्मा जी उत्पन्न हुए थे। ब्रह्मा जी के पुत्र अत्रि, अत्रि के पुत्र चन्द्रमा, चन्द्रमा के पुत्र बुध, बुध के पुत्र पुरुरवा, पुरुरवा के पुत्र, नहुष, नहुष के पुत्र ययाति। ययाति के एक रानी देवयानी से हुए यदु और दुर्वसुनाम के दो पुत्र और दूसरी रानी शर्मिष्ठा से ब्रह्म, अनु और पुरु-ये तीन पुत्र हुए।

पुरु के पुत्र जन्मेजय, जन्मेजय के पुत्र प्राचंन्वान प्राचंन्वान के पुत्र प्रवीर, प्रवीर के मनस्यु, मनस्यु के पुत्र अभयद्य, अभयद्य के पुत्र उरुत्तय, उरुत्तय के पुत्र त्र्यरुणि, त्र्यरुणि के पुत्र पुष्करारुणि, पुष्क-

रुणि के पुत्र वृहत्क्षेत्र, वृहत्क्षेत्र के पुत्र हस्ति हुए। इन्हीं हस्ति राजा ने अपने नाम से हस्तिनापुर नाम का नगर बसाया था।

हस्ति के तीन पुत्र हुए उनके नाम ये हैं:-अजमीढ़, अहिमोड़ और पुरुमीढ़। अजमीढ़ के पुत्र ऋत्त, ऋत्त के पुत्र संवरण और संवरण के पुत्र कुरु हुए।

कुरु के पुत्र परीक्षित, परीक्षिति के पुत्र सुधनु, सुधनु के पुत्र सुहोत्र, सुहोत्र के पुत्र च्यवन, च्यवन के पुत्र वृहद्रथ, वृहद्रथ के पुत्र कुशाग्र, कुशाग्र के पुत्र ऋषभ, ऋषभ के पुत्र सत्यजीत, सत्यजीत के पुत्र पुष्पवान और पुष्पवान के पुत्र नहुष हुए।

वृहद्रथ की दूसरी स्त्री से महाबलवान और योद्धा जरासन्ध हुए। जरासन्ध के पुत्र सहदेव सहदेव के पुत्र सोमापि, सोमापि के पुत्र श्रुतश्रवा, श्रुतश्रवा के पुत्र सुरथ सुरथ के पुत्र विद्धरथ, विद्धरथ के सविभौम, सविभौम के पुत्र जयसेन, जयसेन के पुत्र रथानीक, और रथानीक के पुत्र युतायु हुए।

युतायु के पुत्र देवातिथि, देवातिथि के पुत्र ऋक्षि, ऋक्षि के पुत्र दिलीप, दिलीप के पुत्र प्रतीपक हुए। हे भगवन्! मैं उन्हीं महाराज प्रतीपक का पुत्र देवापि हूँ।

मैं शान्तनु को अपना राज्य देकर कलाप ग्राम में तप करता था। वहाँ से मैं आपके दर्शन के

लिये यहाँ आया हूँ। मैंने आपके सूर्यवंश के राजर्षि मरु, देवर्षि और ब्रह्मर्षियों से सुशोभित आपके दर्शन किये हैं, इस लिये मुझे विश्वास है कि मैं कराल काल से नष्ट न हूँगा और मुझे ब्रह्म ज्ञानियों की पदवी मिलेगी।

महाराज देवापि की कथा सुन भगवान् कल्कि जी बोलेः—

भगवान् कल्कि जी—मैं जानता हूँ कि आप दोनों परम धर्मज्ञ राजा हैं। इस समय आप हमारी आज्ञा से अपने अपने राज्यों में जाकर राज काज सम्भालें। हे मरु! मैं अधर्मियों का नाश कर, तुम्हें अयोध्या का राजा बनाऊँगा। हे राजर्षि देवापि! मैं लड़ाई में पुक्कसों का नाश कर, तुम्हें तुम्हारी राजधानी हस्तिनापुर में राजा बना कर बैठाऊँगा। मैं मथुरा जी में रह कर तुम्हारी रक्षा करूँगा। शय्याकरण, उष्ट्रमुख, एकजंघ आदि का नाश कर सत्ययुग को फिर से वर्त्ताऊँगा। आप सब भी तपस्वी का भेष और वृत्ति को छोड़,रथ पर सवार हूजिये। आप सब हथियार चलाने में चतुर हैं इस लिये आप हमारे साथ रहें। हे मरु! राजा विशाखयूप आपका विवाह एक कन्या से कर देगा और हे देवापि! आप भी शान्ता नाम की कन्या से विवाह करैं। आप लोग राजा हो कर, संसार का मङ्गल करने का उद्योग करते रहैं।

जिस समय कल्कि जी ने यह कहा उसी समय आकाश से अपने आप दो रथ नीचे उतरे। वह तरह तरह के हथियारों

से सजे थे। विश्वकर्मा के बनाये दोनों रथों को देख कर सारे उपस्थित सज्जन बड़े खुशी हुए। उस समय सब को अचरज में देख कर भगवान् कल्कि जी बोले:—

भगवान् कल्कि जी—सभी जानते हैं कि तुम दोनों राजा हो कर संसार की रक्षा और पृथ्वी का पालन करने के लिये देवताओं के अंश से उत्पन्न हुए हो। इतने दिनों तक तुम सब अपने अपने आकार छिपा कर रहते थे और अब यहाँ मेरे दर्शनों के लिये आये हो। इस लिये तुम मेरी आज्ञा से इन्द्र के दोनों रथों पर चढ़ो।

जब संसार के स्वामी कल्कि जी यह सब कह रहे थे: तब देवता गण उनके ऊपर फूल बरसा रहे थे। ऋषिगण उस समय स्तोत्र पाठ कर रहे थे। सुगन्धित हवा धीरे धीरे बहने लगी। चारों दिशाओं में आनन्द की एक विचित्र छवि, शोभा दे रही थी। प्रत्येक धर्मात्मा के मुख पर एक तरह की बड़ी पवित्र ज्योति दिखलायी दे रही थी।

उसी समय वहाँ एक प्रचण्ड तेजधारी, हाथ में दण्ड लिये हुए, एक ब्रह्मचारी आया। उसके शरीर का रङ्ग तपाये हुए सोने की तरह था। उससे एक जगमगाती हुई प्रभा निकल रही थी। यह ब्रह्मचारी सुन्दर कपड़े पहिने था और ऐसा मालूम देता था कि मानो केवल उसके शरीर के छूने ही से सारे पाप नष्ट होजायँगे। उसके मुख की स्वर्गीय ज्योति दर्शकों के हृदय में बड़ा प्रभाव (असर) डाल रही थी।

१९—सत्ययुग-आगमन।

उस ब्रह्मचारी को देख कर कल्कि भगवान् अपनी सभा समेत उठ खड़े हुए और उन्होंने उसकी पूजा की। फिर भगवान् कल्कि ने उस ब्रह्मचारी को एक ऊँचे आसन पर बैठा कर कहाः—

भगवान् कल्कि जी—हे महाभाग! आप कौन हैं? आज हमारा कौन सा ऐसा भाग्य उदय हुआ है कि आप ऐसे महात्मा यहाँ पधारे हैं। जो महात्मा होते हैं, जो पाप से दूर रहते हैं, जो सारे संसार की भलाई चाहते हैं, वे बहुधा (अक्सर) संसार में घूमा करते हैं। हमें आप उन्हींमें से एक महात्मा जान पड़ते हैं।

ब्रह्मचारी—हे देव! मैं आपका आज्ञाकारी सत्ययुग हूँ। मैं आप को अवतार रूप में देखने के लिये यहाँ आया हूँ। आप काल हैं। आपही की माया से यह सारा जगत उत्पन्न हुआ है। आप ही के प्रभाव से पक्ष, दिन रात्रि, मास, ऋतु, साल, युग और चौदह

मनु[१] नियमित रूप से घूमते हैं। देवताओं के बारह बारह हज़ार वर्ष का एक चौकड़ी युग होता है। ऐसे ही ऐसे चार हज़ार, तीन हज़ार, दो हज़ार और एक हज़ार वर्षों के क्रम से सत्ययुग, त्रेतायुग, द्वापर युग और कलियुग होते हैं।

हर एक मनु इकहत्तर चौकड़ी युग तक पृथ्वी भोगते हैं। इकहत्तर चौकड़ी युग के बाद दूसरा मनु आता है। जितने दिनों तक चौदह मनु राज्य करते हैं, उतने दिनों का ब्रह्मा का एक दिन होता है। ब्रह्मा की एक रात भी इतनी ही बड़ी होती है।

जब ब्रह्मा जी की उमर सौ वर्ष की हो जाती है तब वे आपमें लय होजाते हैं। फिर प्रलय के समाप्त होने पर आपकी नाभि के कमल से फिर दूसरे ब्रह्मा जी पैदा होते हैं।

इन्हीं समयों का मैं भी एक अंश हूँ। मुझे कृत युग भी कहते हैं; क्योंकि मेरे अधिकार के समय में उत्तम धर्म पृथ्वी पर पालन होता है। मेरे द्वारा प्रजा, धर्म कर, कृतकृत्य होती है। इसी कारण मैं कृतयुग के नाम से विख्यात हूँ।

---

१ चौदह मनु—पहिले स्वायम्भुव मनु, दूसरे स्वारोचिष मनु, तीसरे उत्तम मनु, चौथे तामस मनु, पाँचवें रैवत मनु, छठें चाक्षुप मनु, सातवें वैवस्वत मनु, आठवें सावित्कर्णि मनु, नवें दक्षसावर्णि मनु, दसवें ब्रह्मसावर्णि मनु, ग्यारहवें धर्मसावर्णि मनु, बारहवें रुद्रसावर्णि मनु, तेरहवें वेदसावर्णि मनु, चौदहवें इन्द्रसावर्णि मनु।

सत्ययुग के ये वचन सुन कर, कल्कि जी अपने अनुचरों (सेवकों) के साथ बड़े प्रसन्न हुए।

उन्होंने सत्ययुग स्थापन करने के लिए कलि के प्रधान नगर विशासनपूर में जा कर युद्ध करना चाहा। इस लिये वे बोलेः—

भगवान् कल्कि जी—जो वीरगण, हाथी घोड़े, रथ आदि पर चढ़कर या पैदल युद्ध करना चाहें, वे युद्ध के लिये तयार हों।

२०-कल्कि-युद्ध ।

सूत जी बोलेः—

मरु और देवापि ने अपना अपना विवाह कर लिया था । इस समय वे दोनों वीर रथों पर सवार हो वहाँ पर आये । वे दोनों अपनी वीरता के अभिमान में चूर थे । उन दोनों के साथ छः अक्षौहिणी सेना थी ।

विशाखयूप राजा के साथ भी कई अक्षौहिणी सेना थी । इस तरह भगवान् कल्कि कुल दस अक्षौहिणी सेना लेकर विशासनपुर जाने को तयार हुए ।

उसी समय धर्म ब्राह्मण का वेष धर कर वहाँ आया । उस के साथ ऋतु, प्रसाद, अभय, सुख, प्रीति, योग, अर्थ, अहङ्कार, स्मृति, क्षेम आदि उसके सेवक थे । श्रद्धा, मैत्री, दया, शान्ति, तुष्टि, पुष्टि, क्रिया, उन्नति, बुद्धि, मेधा, तितिक्षा, आदि भी भगवान् कल्कि जी के दर्शन करने के लिये आये ।

ब्राह्मण का वेष धरे धर्म को देख कर, भगवान् कल्कि जी ने उसकी पूजा की और कहाः—

भगवान् कल्कि जी–हे महाभाग ! आप कौन हैं ? आप कहाँ से आये हैं। आप इस समय बड़े दुखी मालूम होते हैं। जिस तरह पाखण्डियों के राज्य में रह कर धर्मात्मा की बुरी दशा हो जाती है उसी तरह, हे देवता ! आपकी भी दशा हो रही है। आप हम से अपनी सारी कथा कहें।

सारे संसार का मङ्गल करने वाले कल्कि भगवान् के ऐसे वचन सुन दुःख से कातर धर्म बोलाः—

धर्म–हे दीनानाथ ! मैं अपना हाल कहता हूँ सुनिये। मैं आपके वक्षस्थल से उत्पन्न हुआ धर्म हूँ। मैं सारे प्राणियों की मनोकामना (इच्छा) पूरी करता हूँ।

सारे देवताओं में पहिले मेरा ही नाम लिया जाता है। मुझको यज्ञ का हव्यकव्य मिलता है। मैं यज्ञ करने वाले को, यज्ञ का फल देता हूँ। मैं साधुओं की मनोकामना पूरी किया करता हूँ और मैं साधुओं के साथ ही रहा भी करता हूँ।

इस समय शक, कम्बोज, शवर आदि म्लेच्छ जातियाँ यहाँ कलि के अधिकार में रहती हैं। इस समय, समय के फेर से, मैं बलवान कलि से हार गया हूँ।

हे जगदाधार ! इस समय साधू लोग दुखी हैं। मैं उनके दुःख को दूर करने के लिये आपसे प्रार्थना करने यहाँ आया हूँ।

धर्म की प्रार्थना सुन भगवान् कल्कि जी बोलेः—

भगवान् कल्कि जी–हे धर्म ! देखो सत्ययुग आ पहुँचा है । मैंने ब्रह्मा जी की प्रार्थना से अवतार लिया है–यह तो तुम्हें मालूम ही है । मैंने कीटक देश में बौद्धों का नाश किया है । यह सुन कर तुम सुखी होगे कि जो वैष्णव नहीं हैं जो तुमको दुख दिया करते हैं; उनका नाश करने के लिये मैं जा रहा हूँ । इस समय तुम निडर हो कर घूमो । जब मैं उपस्थित (मौजूद) हूँ और सत्ययुग आ गया है; तब तुम्हें क्या डर है ? तुम यज्ञ, दान और व्रत के साथ सारी पृथ्वी पर घूमो । हे धर्म ! तुम भले आदमियों के प्यारे हो । तुम सारी पृथ्वी में घूमो । मैं तुम्हारी सहायता (मदद) करूँगा ।

यह सुन धर्म बड़ा प्रसन्न हुआ । वह युद्ध में चलने के लिये तयार हुआ । उसने योद्धा का वेष बनाया । उसके रथ वेद और ब्रह्म हुए । शास्त्र उसका धनुष हुआ । वेद के सात स्वर उसके रथ के घोड़े हुए । ब्राह्मण उसका सारथी (कोचवान्) हुआ । अग्नि उसके बैठने की गद्दी हुई । इस तरह धर्म सेना नायक बन कर युद्ध करने चला ।

भगवान् कल्कि जी इस तरह सज कर, खश, काम्बोज, शबर, बर्बर आदि म्लेच्छों को जीतने चले । ये सब कलि के राज्य में थे । कलि के रहने की जगह में भूत, प्रेत, डाकिनी, शाकिनी आदि नाच रही थीं और उसके चारों ओर कुत्ते भूँक रहे थे । यह स्थान गोमांस से भरा था, यहाँ कौए, गीध, उल्लू आदि भरे थे । यहाँ स्त्रियां आपस में लड़ कर क्लेश और

विवाद बढ़ा रही थीं। जगह जगह पर जुआ हो रहा था।

यह नगरी बिल्कुल श्मशान सी थी। यहाँ के रहने वाले स्त्रियों के गुलाम (दास) थे और वे उनकी आज्ञा पालन में कोई भी उज्जुर न कर सकते थे। उनकी आज्ञानुसार ही सारा काम होता था; अर्थात्, वहाँ उन्हींका (स्त्रियों का) प्राधान्य था।

जब कलि ने भगवान् कल्कि जी का आना सुना, तब वह क्रोधित हो अपने बेटे पोतों के साथ नगर से बाहर आया। वह एक रथ पर सवार था जिसकी झण्डी में उल्लू की तसवीर बनी थी। कलि को देख कर, धर्म ने ऋषियों को साथ लेकर, कल्कि जी की आज्ञा से उससे लड़ना आरम्भ किया।

सत्य के साथ दम्भ युद्ध करने लगा, प्रसाद ने लोभ को ललकारा। अभय ने क्रोध को दबाया और सुख भय से भिड़ गया। निरय प्रीति के साथ युद्ध करने लगा। आधि ने योग के साथ, व्याधि ने क्षेम केसाथ ग्लानि ने प्रश्रय के साथ और जरा (बुढ़ापे) ने स्मृति से युद्ध करना आरम्भ किया।

इस तरह सब अपनी अपनी जोड़ियों से लड़ने लगे। थोड़ी ही देर में बड़ा भयङ्कर युद्ध होने लगा। देवता आकाश में आकर युद्ध करने लगे। मरु, खस और काम्बोज से युद्ध करने लगे। देवापि ने चीन और बबरों से युद्ध करना आरम्भ किया। राजा विशाखयूप ने पुलिन्द और स्वपचादि से युद्ध किया। भगवान् कल्कि जी कोक और विकोक के साथ युद्ध करने लगे।

यह कोक और विकोक दो भाई थे। यह दोनों दानव थे। इन्होंने ब्रह्मा जी का तप करके उनसे वरदान पाया था। ये दोनों बड़े बलवान्, उन्मत्त और युद्ध करने में चतुर थे। ये सदा देवताओं को दुःख दिया करते थे। इन दोनों का रूप एक

ही सा था। इनका शरीर वज्र की समान मज़बूत था। ये दोनों इकट्ठे होकर चाहते तो मृत्यु को हटा देते। ये दोनों अपनी अपनी सेना लेकर, और हाथों में गदा ले, पैदल ही युद्ध करने लगे।

भगवान् कल्कि जी से और कोक और विकोक से युद्ध होना आरम्भ हुआ। थोड़ी ही देर में युद्ध ने भयङ्कर रूप धारण किया। घोड़ों के हिनहिनाने, हाथियों के चिकारने, दाँतों के कटकटाने, धनुषों की टङ्कार, और तलवार आदि के टकर की आवाज़ों से रणभूमि भर गयी।

दसों दिशाओं में ये आवाज़ फैल गयी। देवता लोग डर कर अपने अपने स्थान को टेढ़े, उलटे, सूधे होकर भागने लगे। अनगिनतिन मनुष्य मर कर पृथ्वी पर गिर पड़े और उनके कटे हाथ, पैर, सिर आदि भयङ्कर युद्धभूमि को और भी भयङ्कर करने लगे।

२१—कोक-विकोक वध।

इस तरह घमासान लड़ाई होती देख, धर्म कलि से बड़ी वीरता से लड़ने लगा। कलि धर्म और सत्ययुग की बाण वर्षा से हार कर, अपनी सवारी गधे को छोड़ कर, विशासन पुरी में घुस गया।

उसका रथ जिसकी झण्डी पर उल्लू की तसवीर बनी थी। लड़ाई में टूट फूट गया। उसके शरीर (बदन) से लोहू बहने लगा। उसके बदन से छछूँदर की सी बास निकलने लगी। उसका मुँह और भी अधिक भयंकर होगया। ऐसी दशा (हालत) होजाने पर वह अपनी स्त्री के पास भाग गया।

दम्भ भी पराजित होकर भाग गया। प्रसाद ने अपनी लातों से लोभ का सिर तोड़ दिया। उसका रथ जिसमें कुत्ते जुते थे टूट गया और वह लोहू की कै (वमन) करता हुआ भागा।

अभय ने क्रोध को पछाड़ा। उसका भी रथ जिसमें चूहे जुते थे टूट फूट गया और वह (क्रोध) लाल लाल आँखें किये विशासन नगर की ओर भागा।

सुख ने भय को और प्रीति ने निरय को मार डाला। आधि व्याधि आदि सभी को सत्ययुग ने अपने बाणों से वेध कर भगा दिया।

फिर सत्ययुग के साथ धर्म ने कलि की प्रधान राजधानी विशासन नगरी में प्रवेश किया। वहाँ घमासान लड़ाई हुई और कलियुग के सभी साथी और कुटुम्बी मारे गये। वह बेचारा घायल हो कर दूसरे देश में भाग गया।

इस ओर मरु ने शक और काम्बोजों को मार डाला। देवापि ने शबर, चोल और बर्बरों का नाश कर दिया। राजा विशाखयूप ने पुलिन्द और पुक्कसों को हराया।

भगवान् कल्कि जो रथ से उतर, हाथ में गदा ले कर कोक और विकोक से गदा युद्ध करने लगे। कोक और विकोक के गदा से भगवान् के हाथ से गदा छूट गयी। उस समय भगवान कल्कि जी ने विकोक का सिर काट डाला।

महा बलवान् विकोक मुर्दा हो कर ज़मीन पर गिर पड़ा। पर जैसे ही उसके भाई कोक ने उसे देखा, वैसे ही वह फिर उठ खड़ा हुआ और लड़ने लगा। विकोक को इस तरह उठते देख भगवान् ने कोक का सिर काट डाला। किन्तु जैसे ही विकोक ने उसे देखा वैसे ही वह फिर उठ खड़ा हुआ।

दोनों मिल कर भगवान् पर तलवार चलाने लगे। इस समय भगवान् ने दोनों के सिर काट डाले। पर आश्चर्य! उनके सिर फिर धड़ से जुड़ गये। उस समय दोनों को वार करते देख, भगवान् के घोड़े ने उन पर प्रहार किया। अब घोड़े की शामत आयी। वे दोनों राक्षस घोड़े पर तीर चलाने लगे। घोड़ों ने आगे बढ़ कर कोक और विकोक की बाहों में बड़ी ज़ोर से काट खाया। इससे इनके बाहों की हड्डी चकना चूर

होगयी। उनका वाजू और और धनुष टूट गया। फिर तो दोनों ने घोड़े की पूँछ पकड़ कर खेंचना आरम्भ किया। इस पर घोड़ा दुलत्ती झाड़ने लगा। उसने इतनी ज़ोर से दोनों की छाती में दुलत्ती मारी कि वे दोनों वेहोश होगये। पर वे चट पट उठे और भगवान् से लड़ने लगे।

उस समय ब्रह्मा जी कल्कि भगवान् के पास आये और बोलेः—

ब्रह्मा जी–हे परमात्मन्! इन कोक और विकोक की मौत हथियार से नहीं है। एक समय ही में दोनों को थप्पड़ मार कर, दोनों मारे जा सकते हैं। इन दोनों में एक के देखते ही दूसरे की मौत न होगी। यह ध्यान रख कर आप इसे मारने का उद्योग (कोशिश) करें।

यह सुन भगवान् कल्कि जी. हथियारों को छोड़ कर दोनों राक्षसों के बीच में आये। यह मौका पा कर उन्होंने एक साथ ही दोनों के सिरों में ज़ोर से घूँसा मारा। उस घूँसे से दोनों के सिर चूर हो गये। वे दोनो राक्षस दो पहाड़ के टुकड़ों के समान बड़ी भारी आवाज़ करते हुए ज़मीन पर गिर पड़े, और मर गये।

देवताओं के शत्रुओं को मरा देख, गन्धर्व गण गाने लगे। अप्सरायें नाचने लगीं। मुनि और ब्राह्मण स्तुति पाठ करने लगे। देव, सिद्ध, चारण आदि प्रसन्न हो आकाश से फूल बरसाने लगे।

उसी समय कवि, प्राज्ञ, गर्ग्य, भर्ग्य आदि ने भी कलि के बहुत से अनुगामियों को मार डाला।

२२–कल्कि जी और राजा शशिध्वज की सेनाओं की लड़ाई।

विशासन नगर में जय पा कर, वे दिग्विजय करने चले। सफ़ेद घोड़े पर सवार हो भगवान् कल्कि जी आगे आगे चले। उनके पीछे और सेना चली। अन्त में वे भल्लाट नाम के एक नगर में पहुँचे।

उस नगर में राजा शशिध्वज नाम के एक राजा राज्य करते थे। वे बड़े बुद्धिमान, श्रीमान् दीर्घाकार, तेजस्वी और कृष्णभक्त थे। जब उन्होंने विश्वेश्वर भगवान् कल्कि जी का युद्ध के लिये आना सुना, तब वे सेना ले कर उनसे लड़ने के लिये नगर से निकले।

राजा शशिध्वज की स्त्री का नाम सुशान्ता था। वह भी बड़ी कृष्ण-भक्त थी। अपने पति को भगवान् कल्कि जी से युद्ध करने के लिये जाता देख कर बोली:–

सुशान्ता—हे स्वामी! सर्वान्तर्यामी, जगन्नाथ प्रभु कल्कि जी नारायण के अवतार हैं। आप उनके भक्त हैं। कहिये आप उन पर किस तरह हथियार चलावेंगे।

शशिध्वज–धर्मानुसार लड़ाई में, श्रीनारायण, पूज्य गुरु, आदि सभी वड़ों पर हथियार चलाया जा सकता है। युद्ध में जीतने पर पृथ्वी का राज्य मिलता है। इस लिये क्षत्रियों को युद्ध में जय और मृत्यु दोनों ही भली हैं।

सुशान्ता–जो लोग कामी हैं, जिनका मन सदा विषयों में फँसा रहता है, उनके लिये युद्ध में जय पाने पर राज्य और मृत्यु होने पर स्वर्ग मिलना लिखा है। किन्तु जो भगवान् के सेवक हैं उनके लिये यह कुछ भी नहीं है। आप सेवक हैं, वे ईश्वर हैं। आप निष्काम हैं वे फलप्रदान करने वाले नहीं हैं। फिर ऐसी हालत में मोह में पड़ कर दोनों कैसे युद्ध कर सकते हैं।

राजा शशिध्वज–परम पुरुष भगवान् सुख दुःखों में सम्मिलित नहीं हैं। यदि ईश्वर और भक्त में केवल शरीर धारण करने ही से द्वन्द्व युद्ध होजाय तो वह लीला मानी जायगी। जव भगवान् ने मूर्त्ति धारण की तव काम आदि माया भी उनके शरीर में आ गयीं काम आदि के होने से उनकी देह में काम आदि विषय क्यों न मिले होंगे? पूर्ण स्वरूप, ब्रह्मभाव युक्त ईश्वर को ब्रह्म कहते हैं और मूर्त्तिमान शरीर धारी भगवान् को शारीरता कहते हैं। जिस सेवक में भेद दृष्टि नहीं रह गयी है, यानी जिसकी दृष्टि में भेद भाव नहीं है, उसका जन्म और लय भी यों ही होता है। सेव्य और सेवक भाव ही से सेवा कही जाती है यह वैष्णवी माया का काम है। इस

द्वैताद्वैत दृष्टि ही से साधुओं को त्रिवर्ग की प्राप्ति होती है। हे कान्ते! मैं इसी कारण से कल्कि जी से युद्ध करने जाता हूँ तुम भगवान की पूजा करो।

सुशान्ता–हे स्वामी! आप विष्णु जी की सेवा कर विष्णु जी ही में लीन हो गये हैं। इससे मेरा भी मङ्गल (भला) है। इस लोक और परलोक में विष्णु पूजा के सिवाय पापों से मुक्ति पाने का और कोई दूसरा उपाय नहीं है।

सुशान्ता से विदा होकर महाराज शशिध्वज अपने वैष्णव सैनिक लेकर लड़ाई के लिये नगर से निकले। राजा ने कल्कि भगवान् की सेना में घुस कर, उसके एक बड़े भाग को तितर बितर कर दिया। भगवान् कल्कि जी की सेना भी तयार हो राजा शशिध्वज की सेना से लड़ने लगी।

महाराज शशिध्वज का पुत्र महा बलवान श्रीसूर्यकेतु, सूर्य वंशी महाराज मरु से लड़ने लगा। सूर्यकेतु का छोटा भाई बृहत्केतु जो कि गदायुद्ध में प्रसिद्ध था, चन्द्रवंशी महाराज देवापि से युद्ध करने लगा। राजा विशाखयूप राजा शशिध्वज से युद्ध करने लगा। महावीर भर्ग्य शान्त के साथ युद्ध करने लगा।

थोड़ी ही देर में युद्ध भूमि बड़ी भयंकर हो गयी। सूर्यकेतु ने मरु को बाणों से घायल कर दिया। मरु ने भी दस बाणों से सूर्यकेतु को बेध डाला। मरु के तीरों से घायल हो जाने पर सूर्यकेतु बड़ा क्रोधित हुआ। उसने मरु के रथ के घोड़ों को मार डाला और रथ को चकना चूर कर दिया। इसी समय मरु की छाती में उसने ज़ोर से एक गदा मारी। इस

चोट से मरु मूर्च्छित होकर गिर पड़े। उनका सारथी उन्हें दूसरे रथ में उठा ले गया।

इधर बृहत्केतु ने अपने तीरों से महाराज देवापि को ढाँप दिया। जिस तरह सूर्य भगवान कुहरे से निकल आते हैं उसी तरह देवापि ने उसी समय अपने तीरों से बृहत्केतु के तीरों को बेकाम कर दिया और उसके धनुष को तोड़ डाला। अपने धनुष की ऐसी दशा देख बृहत्केतु देवापि और उसकी सेना पर हमला करने लगा। देवापि ने भी अपने बाणों से उसका धनुष तोड़ डाला। धनुष टूट जाने पर बृहत्केतु तलवार लेकर देवापि को मारने दौड़ा। उसने देवापि के रथ के घोड़ों और सारथी को मार डाला। यह देख देवापि ने धनुष छोड़ दिया और उसने बृहत्केतु के एक चपत जमायी। फिर उसको दोनों बाहों में जकड़, उसे दबाना शुरू किया। इस से बृहत्केतु मूर्च्छित होकर गिर पड़ा। अपने छोटे भाई की यह दशा देख, राजा सूर्यकेतु ने महाराज देवापि के सिर में एक घूँसा मारा। इस घूँसे की चोट से देवापि बेहोश होकर गिर पड़ा। इधर सूर्यकेतु देवापि की सेना का नाश करने लगा।

इस ओर राजा शशिध्वज ने युद्धभूमि में ब्रह्माण्ड के आधार भगवान् कल्कि को देखा।
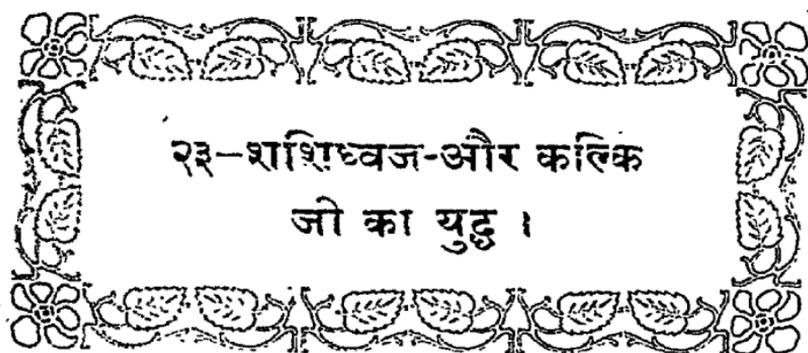
२३–शशिध्वज-और कल्कि जी का युद्ध ।

कमल नयन भगवान् कल्कि जी को अपने सामने देख कर, राजा शशिध्वज बड़े प्रसन्न हुए । वे बोलेः–

राजा शशिध्वज–हे पुण्डरीकाक्ष ! आप हम पर प्रहार करें। देखिये, यदि आप हमारे तीरों से डर कर कहीं छिपना चाहें, तो और कहीं न जा कर मेरे अँधेरे हृदय ही में छिप रहियेगा । जो निर्गुण हो कर भी गुण को जानते हैं, जो अद्वैत हो कर भी हथियार चलाने को तयार हैं,जो निष्काम होकर भी जय पाने के लिये अस्त्र चलाने को तयार हैं, मैं उन्हीं परमात्मा के साथ युद्ध करता हूँ । सब लोग देखें । तुम विभू हो,मैं तुम पर कड़ा प्रहार करूँगा । किन्तु यदि प्रहार करते समय आपको दूसरा समझूँ तो मुझे वह गति मिले जो कि शिव जी और आपमें भेद समझने वालों को मिलती है।

इतना कह कर भगवान् कल्कि पर राजा शशिध्वज ने तीर चलाया । यह देख भगवान् कल्कि जी भी लड़ने लगे । खूब

घमासान युद्ध हुआ। अन्त में दोनों हथियार छोड़ कुश्ती लड़ने लगे। भगवान् कल्कि ने राजा शशिध्वज के एक घूँसा मारा इससे राजा बेहोश होकर गिर पड़े; पर शीघ्र ही उठे और उन्हों ने भगवान् कल्कि के बड़ी ज़ोर से एक घूँसा मारा। भगवान् कल्कि जी बेहोश हो गये। सत्ययुग और धर्म दोनों उन्हें लेने को आये पर राजा शशिध्वज ने उन दोनों को दो बगलों में दबा लिया और भगवान् को गोदी में उठा वे अपने महलों की ओर चले।

घर आ कर उन्होंने देखा कि उनकी रानी सुशान्ता बैठी हुई नारायण की पूजा कर रही है। उसके चारों ओर वैष्णवी बैठीं भगवद्भजन कर रही हैं। राजा ने कहाः—

राजा शशिध्वज—जिन्होंने देवताओं की प्रार्थना से सम्भल ग्राम में जन्म लिया है, जिन्होंने पाखण्डी म्लेच्छों का नाश किया है। हे सुशान्ता! यह वही नारायण कपट मूर्च्छा धरकर यहाँ पर आये हैं। यह देखो धर्म और सत्ययुग हमारी बग़ल में दबे हैं। तुम इन की पूजा करो।

यह सुन सुशान्ता बड़ी प्रसन्न हुई। वह तीनों को प्रणाम कर स्तुति करने लगी।
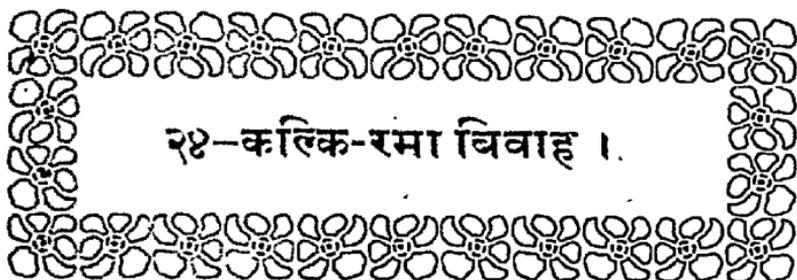
२४—कल्कि-रमा विवाह।

सुशान्ता स्तुति करने लगी—हरे जय हो। हे महामते! आपका यश गान करने ही से संसार का शोक नष्ट हो जाता है। आप सारे संसार का मङ्गल करते हैं। हे भगवान्! हम पर दया कीजिये। हमारे पति को कोई भी हरा नहीं सका है। यदि किसी कारण आप उनसे अप्रसन्न हो गये हों तो कृपा कर प्रसन्न हों। नहीं तो हम आपको दयासागर कैसे कह सकते हैं? आप सब को अभयदान करते हुए, घोड़े पर चढ़ घूमा करते हैं। आपके तीरों से अनगिनतिन अभिमानी वीरों ने प्राण खोये हैं। जो बलवान् योद्धा संग्राम में आपके हाथ से मारे गये हैं, वे धन्य हैं। क्योंकि वे आपके मुख को, जिस पर सैकड़ों चन्द्रमा की कान्ति है, देखकर मरे हैं। महादेव जी और ब्रह्मा जी भी आपका आश्रय चाहते हैं। हे देव! आप सनातन ब्रह्म हैं।

सुशान्ता की स्तुति सुन कर भगवान् कल्कि जी उठ बैठे, और बोले:—

भगवान् कल्कि—हे भद्रे! तुम कौन हो? किस लिये तुम हमारी इतनी सेवा कर रही हो? महावीर शशिध्वज हमारे पीछे क्यों आये हैं? हे धर्म! हे सत्ययुग हम लोग

युद्ध भूमि छोड़ कर किस लिये शत्रु के यहाँ आये हैं ? मैं शत्रु हूँ शत्रु की स्त्रियाँ क्यों मेरी स्तुति कर रही हैं । मैं मूर्च्छित होगया था, शशिध्वज ने मुझे मार क्यों नहीं डाला ?

सुशान्ता—पृथ्वी, स्वर्ग रसातल सभी जगह के रहने वाले आप की स्तुति और सेवा किया करते हैं जगत् जिसका सेवक है जगत जिसका मित्र है, माया में पड़ कर क्या कोई भी उसका शत्रु हो सकता है ? मेरे पति यदि शत्रु भाव से आपसे युद्ध करते तो क्या आप को यहाँ ला सकते थे । मेरे स्वामी आपके दास हैं । मैं आपकी दासी हूँ । हे देव ! मुझ पर प्रसन्न होकर आप यहाँ पधारे हैं नहीं तो भला आपको यहाँ कौन ला सकता था ?

धर्म–हे कलि नाशन ! ये दोनों ही आपकी भक्ति करते हैं । मैं इनकी भक्ति देख कर, बड़े अचरज में पड़ा हूँ ।

सत्ययुग–हे देव ! आज आपके इन भक्तों का दर्शन कर मैं सत्य-युग के नाम से गिना गया हूँ ।

शशिध्वज—हमने आपसे काम, क्रोध, राग आदि के कारण शत्रुता की है । आप हमारे आत्मा हैं । हमने अपने ही आत्मा में आघात किया है ।

भगवान् कल्कि जी यह सुन बड़े प्रसन्न हुए । सुशान्ता और शशिध्वज ने उन्हें अपनी कन्या रमा व्याह दी । युद्ध बन्द होगया और सब में मेल हो गया ।

२५-शशिध्वज के पूर्व जन्म की कथा।

जब दूसरे राजाओं ने महाराज शशिध्वज को देखा तो वे उनसे पूछने लगेः—

राजा—भगवान् पर आपकी इतनी गाढ़ी भक्ति देख कर, हम सब बड़े विस्मित हुए हैं। हम लोग जानना चाहते हैं कि आपको यह भक्ति कहाँ से मिली? हे राजन्! क्या आपने यह भक्ति किसी से सीखी है? या यह आपकी स्वाभाविक भक्ति है? सो कृपा कर कहिये।

शशिध्वज—हे राजा गण! जिस प्रकार हमें भक्ति प्राप्त हुई है सो हम आपसे कहते हैं। बहुत दिन हुए हम स्त्री पुरुष सड़े माँस के खाने वाले गिद्धनी और गिद्ध थे। हम दोनों एक बड़े पेड़ पर घोंसला बना कर रहा करते थे। हम दोनों ही वन उपवन आदि में घूमते और मुर्दों के माँस को खाया करते थे।

एक दिन एक बहेलिये ने हमें पकड़ने के लिये अपने पाले हुए गीध को छोड़ा। उस समय हम भूँखे थे। सो जहाँ वह पाला हुआ गीध माँस खा रहा था वहाँ बैठे। बैठते ही हम जाल में फँस गये। बहेलिये ने हमें जाल में बँधा देख, आकर हमारा गला पकड़ लिया। हम भी उसे चोंच मारने लगे। फिर उस बहेलिये ने हमें गङ्गा जी के पास गण्डक नदी की शिला पर पटक कर मार डाला। गङ्गा के तीर और चक्राङ्कित शिला पर मृत्यु होने के कारण हम स्वर्ग चले गये। वहाँ बहुत दिनों तक सुख भोग कर अब हम इस पृथ्वी पर राजा होकर उत्पन्न हुए हैं।

जब केवल गङ्गा जी के तीर और भगवान् के चक्र से अङ्कित शिला पर मरने से यह फल होता है, तो भला भगवान् की सेवा से क्या फल न होता होगा? यही सोच कर, हम भगवान् का पूजन कर रहे हैं।

यह सुन कर राजा लोग सारे उपस्थित ऋषि, मुनि साधारण मनुष्य सभी बड़े विस्मित हुए, और उनकी बड़ाई करने लगे और बोलेः-

राजा-भगवद्भक्ति किस का नाम है? विधान जानने वाला भक्त कौन कहाता है? यह भक्त क्या कार्य करता है? वह क्या भोजन करता है? किस तरह और कहाँ रहता है? यह सब आप हमसे कहें।

राजा शशिध्वज-प्राचीन समय में ब्रह्म सभा के बीच महर्षि गण बैठे थे। उस समय सनकादिक ऋषियों ने

यह प्रश्न पूँछे थे। उस समय मैं भी उस स्थान में मौजूद था। मैंने जो कुछ सुना है, सो आपसे कहता हूँ। सनक जी ने नारद जी से पूँछा—हरि में किस प्रकार की भक्ति करने से जन्म नहीं लेना पड़ता और किस प्रकार की भक्ति प्रशंसनीय है। नारद जी ने उत्तर में कहा—लोकतंत्र का जानने वाला चतुर भक्त पाँच इन्द्रिय और मन को वश में करके ज्ञान सीखने के लिये अपने को गुरु के चरणों में समर्पण कर दे। गुरु देव के प्रसन्न होने पर स्वयं भगवान् प्रसन्न होते हैं। शिष्य को चाहिये कि वह प्रणवाग्नि क्रिया के बीच में "ओं" वर्ण को स्मरण करते हुए, मन ही मन भगवान् के चरण कमलों की पूजा करे। कृष्ण जी स्वामी हैं मैं सेवक हूँ और यह सारा विश्व उन्हीं अनन्त कृष्ण जी की मूर्त्ति है। भक्त के मन में यही भाव रहना चाहिये। भक्त भगवान् विष्णु ही का ध्यान करता है, उनही का गान करता है और उन्हींके लिये सब काम करता है, इस लिये उसका आनन्द और सुख बढ़ता है। भक्त भगवान् विष्णु की भक्ति में विह्वल हो नाचता है, रोता है, हँसता है, बेहोश सा हो जाता है और किसी में कोई भी भेद नहीं मानता। यही अव्यभिचारिणी[1] भक्ति है। इसी भक्ति के बल से सारा लोक पवित्र होता है। जो प्रकृति नित्य है

---

[1] अव्यभिचारिणी भक्ति—बहुत दिनों तक, आदर के साथ सेवा करने अव्यभिचारिणी भक्ति कहते हैं।

जो ब्रह्म की सम्पत्ति है, उसीको भक्ति कहते हैं। यह भक्ति वेद आदि से बड़ी है। यही भक्ति ब्रह्मा, विष्णु और शिव का स्वरूप है । जिन ज्ञानियों में सत्व गुण की अधिकता है उन्हें निर्गुणता मिलती है, जो रजोगुणी हैं उन्हें विषयभोग की चाहना उपजती है और जो तमोगुणी होते हैं वे नरक गामी होते हैं ।

विष्णु भगवान् को भोग लगाया हुआ, पवित्र फल और अन्न ही सात्विक नैवेद्य कहा जाता है। यही सात्विक भोजन भक्तों को करना चाहिये ।

जिस भोजन से इन्द्रियाँ प्रसन्न होती हैं, जिससे वीर्य्य और रुधिर की बढ़ती होती है उसे राजस भोजन कहते हैं ।

कड़ुआ, खट्टा, अति गरम, दुर्गन्धदार और बासा (चाहें कुछ हो) आहार (भोजन) तामस भोजन है ।

सतोगुणी वन में, रजोगुणी नगर में और तमोगुणी जुएघर और शराबख़ानों में रहते हैं ।

भगवान् स्वयं किसी को कुछ नहीं देते, सेवक भी उनसे कुछ नहीं माँगते किन्तु तौ भी दोनों में प्रीति रहती है यह बड़े आश्चर्य की बात है।

हे राजा गण ! महर्षि सनक नारद जी से यह सब हाल सुनकर बड़े प्रसन्न हुए और उनकी बड़ाई करके चले गये ।
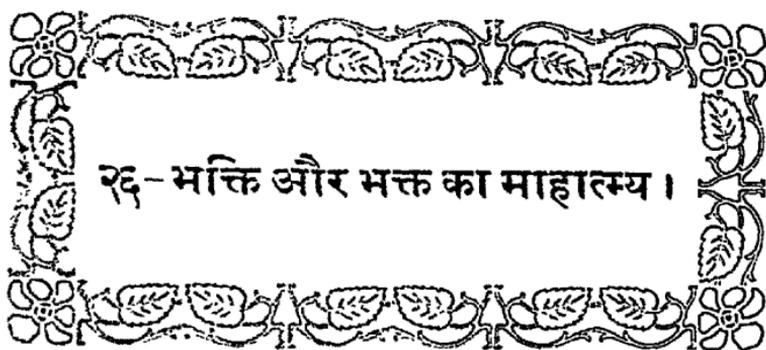
२८-भक्ति और भक्त का माहात्म्य।

राजा शशिध्वज कहते रहे-हे राजा गण ! सदा वन्दनीय भक्तों और भक्ति का मैंने माहात्म्य आपसे कहा है, अब क्या कहने की आज्ञा है ?

राजा लोग—हे शशिध्वज ! आप परम वैष्णव और दूसरों की भलाई चाहने वाले हैं। फिर आप जीवनाशी युद्ध में क्योंकर लड़े ? हमने देखा है कि साधु लोग बहुधा तन मन से विषयासक्त जीवों का हित किया करते हैं।

राजा शशिध्वज- सत, रज, तम इन तीन गुण वाली प्रकृति से ही वेद और त्रिलोक उत्पन्न हुए हैं। वेद तीनों लोकों में धर्म का प्रचार और अधर्म का नाश करते हैं और विषयी लोगों में भक्ति पैदा करते हैं।

जिस तरह वेद के जानने वाले वात्स्यायन आदि महर्षि ईश्वर को प्रसन्न करने के लिये वेदानुसार

बलिदान दिया करते हैं उसी तरह हम लोग वेद के अनुगामी होकर धर्म कर्म करते हुए, धर्म-युद्ध किया करते हैं। वेद की आज्ञानुसार ही हम युद्ध में आततायियों को मारा करते हैं। सब वेदों के जानने वाले भगवान् व्यास जी ने कहा है कि जैसे निर्दोष को मारने से पाप होता है, उसी तरह मारने योग्य यानी दोषी अधर्मी और आततायियों को न मारने से वैसा ही पाप होता है। ऐसा न करने से जो पाप होता है उसका कोई प्रायश्चित्त नहीं है। इसी लिये मैंने अपनी उस सेना को, जो और किसी से न मारी जा सकती थी, भगवान् कल्कि जी से मरवा डाली है और भगवान् कल्कि जी को यहाँ ले आया हूँ।

फिर आप यह भी मानते हैं कि विष्णु भगवान् सर्वव्यापी हैं, तो फिर कौन किसको मारता है और कौन मरता है? मारने वाले भी विष्णु और मरने वाले भी विष्णु ही हैं, फिर किसका वध होगा? इसमें वेद की आज्ञा है कि यज्ञ और युद्ध का वध, वध में नहीं गिना जाता।

सारे ज्ञानी यही कहते हैं। हम भी यही बात कहते हैं।

राजा गण—हे राजन्! राजा निमि ने अपने गुरु वशिष्ट जी के शाप से शरीर छोड़ दिया था। पर उन्हें अपने शरीर से क्यों विराग हुआ? जब देवताओं ने प्रसन्न होकर उन्हें फिर शरीर धारण करने को कहा, तब उन्होंने क्यों शरीर धारण करने से नाहीं कर दी?

सुना है कि महर्षि वशिष्ठ जी ने शाप से शरीर छोड़ा पर फिर जन्म लिया। भक्त को तो मुक्ति मिलती है सो हरिभक्त वशिष्ठ जी का पुनर्जन्म क्यों हुआ?

शशिध्वज—तीर्थ, क्षेत्र आदि में ईश्वर की कृपा से साधुओं का सङ्ग होता है। इस साधु सङ्ग ही से जीव को ईश्वर का दर्शन मिलता है। फिर जीव विष्णुलोक में जाकर भगवद्भजन करता है। इस तरह जीव संसार की सारी वस्तु भोग और विरक्त होकर भक्त हो जाता है। रजोगुणी सदा कर्म द्वारा नारायण की उपासना करते हैं। यह लोग एकादशी आदि व्रत करते हैं। भगवद्पूजा ही से उनका मन प्रसन्न रहता है। वे कभी मोक्ष नहीं चाहते, वरन् स्वर्ग पाने की प्रार्थना किया करते हैं। इस लिये वे हरि भक्त होने पर भी फिर जन्म गृहण करते हैं।

भक्त नारायण के रूप हैं। जैसे श्रीकृष्ण जी ने अवतार लिया था। उसी तरह उनके सेवक भी अवतार लिया करते हैं। इसी लिये वशिष्ठ जी ने मुक्त होने पर भी फिर से जन्म गृहण किया था और यही कारण निमि के शरीर न गृहण करने का है।

२७—सत्राजित्त की कथा ।

सूत जी बोलेः—राजा शशिध्वज सब को प्रसन्न कर भगवान् कल्कि जी से बोलेः—

राजा शशिध्वज—हे देव आप त्रिलोकपति हैं । ये हमारे पुत्र हैं आप इनकी रक्षा कीजियेगा । अब हम अपनी पत्नी के साथ हरिद्वार तप करने जाते हैं । मेरा जो अभि-प्राय है उसे तो आप जानते ही हैं । पूर्व अवतार में आपने जाम्बवान् और द्विविद नामक बन्दरों को जो मारा था, वह तो आपको याद ही होगा ।

यह कह कर राजा शशिध्वज अपनी स्त्री के साथ चलने को तयार हुए और कल्कि जी ने उनकी बातें सुन अपना मुँह लज्जा से नीचाँ कर लिया । भगवान् का ऐसा भाव देख, राजा लोग बड़े आश्चर्य में आये और बोलेः—

राजा लोग—हे भगवन् ! राजा शशिध्वज ने आपसे क्या कहा और आपने अपना मुँह लज्जा से क्यों नीचा कर लिया ? इसका कारण आप हमसे कहें ।

कल्कि जी—हे राजा गण ! आप लोग राजा शशिध्वज ही से इसका कारण पूँछें। वह आपको सब हाल बतावेंगे।

यह सुन राजाओं ने राजा शशिध्वज जी से पूँछा:—

राजा लोग—हे राजर्षि ! आपने अभी भगवान् से क्या कहा और उन्होंने अपना मुँह क्यों नीचा कर लिया सो हमसे कहें।

राजा शशिध्वज—जब मेघनाद हवन कर रहा था, तब लक्ष्मण जी ने उसे वहाँ मारा। इस कारण ब्राह्मण को यज्ञ भूमि में मारने के कारण लक्ष्मण जी को इकतरा बुखार आ गया। वानर वैद्य द्विविद ने लक्ष्मण जी को एक मंत्र सुनाया जिससे उनका बुख़ार उतर गया। इस पर लक्ष्मण जी ने द्विविद से वरदान माँगने को कहा। यह सुन द्विविद ने कहा कि—आपके हाथ से मेरी मृत्यु हो और मैं वानर भाव से छूट जाऊँ। यह सुन लक्ष्मण जीने कहा मैं दूसरे जन्म में बलदेव रूप से जन्म लूँगा तब तुम मेरे हाथ से मारे जाओगे। जो कोई यह मंत्र "समुद्रस्योत्तरे तीरे द्विविदो नाम वानरः" लिख कर देखेगा उसका इकतरा बुखार छूट जायगा। फिर बलदेव जी ने द्विविद को मार कर उसे वानर योनि से छुटा दिया।

जब कृष्ण का अवतार हुआ, तब मैं सत्रा[illegible]त नाम का राजा था। उस समय एक मणि की [illegible]ारी का मैंने श्रीकृष्ण जी को कलङ्क लगाया।

मेरे छोटे [illegible]न था। वह गले में मणि बांध शिकार खेलने गया। वहाँ वह एक सिंह

द्वारा मारा गया। सिंह मणि लेकर एक गुफा में गया वहाँ ऋक्षपति जाम्ववान ने सिंह को मार मणि ले ली।

जब श्रीकृष्ण जी ने यह हाल सुना कि मैं उन्हें मणि की चोरी लगाता हूँ, तब वे मणि को ढूँढ़ने निकले। जाम्ववान से और उनसे लड़ाई हुई। उस युद्ध में भगवान् के चक्र से जाम्ववान का माथा कट गया। तब जाम्ववान् ने उन्हें पहिचाना और उन्हें अपनी लड़की जामवन्ती और मणि दी।

फिर द्वारका जी में आकर भगवान् ने आकर मुझे बुलाया और सब हाल कह कर, मुझे मणि दे दी। उस समय लज्जित होकर उन्हें मैंने मणि और अपनी लड़की सत्यभामा दे दी। श्रीकृष्ण जी मुझे मणि लौटा कर सत्यभामा को ले गये। इनके चले जाने पर शतधन्वा नामक राजा ने मुझे मार कर वह मणि छीन ली।

मैंने श्रीकृष्ण जी को झूठा कलङ्क लगाया इस कारण मेरी मुक्ति नहीं हुई। इसी कारण इस जन्म में, मैं अपनी कन्या सत्यभामा, अहपतिरमा, भगवान् कल्कि को दे ऊँची पदवी पाता हूँ।

कल्कि जी ने अपने ससुर का वध किया था। इसी कारण उन्होंने लोकलाज से अपना सिर झुका लिया था।

२८--विष-कन्या मोक्ष।

फिर भगवान् कल्कि जी अपने ससुर शशिध्वज को प्रसन्न कर और वर देकर चले गये। राजा शशिध्वज वर पा महेश्वरी माया का स्तोत्र कह, स्त्री समेत तप करने चले गये।

कल्कि जी सेना समेत काञ्चीपुरी को चले। इस पुरी के चारों ओर पहाड़ियों की चहारदीवाली है। भयङ्कर सर्प उसकी रक्षा करते हैं। भगवान् ने सर्पों को मार कर नगर में प्रवेश किया। कल्कि जी ने देखा कि वह नगरी तरह तरह के क़ीमती पत्थरों से सजी है। कल्पवृक्ष जहाँ तहाँ लगे हैं। नाग कन्यायें इधर उधर घूम रही हैं, पर वहाँ मनुष्य एक भी नहीं है। जिस समय सेना समेत भगवान् कल्कि जी यह सब देख रहे थे उसी समय आकाश वाणी हुई:—

भगवान् कल्कि जी—इस पुरी में सेना समेत आपको घुसना न चाहिये। इस पुरी की रहने वाली विष-कन्या की नज़र पड़ते ही आपके सिवाय और सब जाँयगे।

यह सुन भगवान् कल्कि जी तोते को साथ लेकर नगर में घुसे। थोड़ी दूर जाकर उन्होंने एक अति सुन्दर विष-कन्या को देखा। वह भगवान् कल्कि जी को देख कर मुसकराती हुई बोलीः—

विष-कन्या—हे महात्मा ! आप कौन हैं ? आज तक सैंकड़ों राजे महाराजे मुझे देखते ही मर गये, किन्तु आप का कुछ न हुआ। मेरी दृष्टि (निगाह) में जो विष था वह आपको देखते ही जाता रहा।

यह सुनकर भगवान् कल्कि जी बोलेः—

भगवान् कल्कि जी—तुम कौन हो ? किसकी कन्या हो ? तुम्हारी ऐसी अवस्था क्योंकर हुई ? तुमने ऐसा कौन सा काम किया था जिससे तुम्हारी दृष्टि में विष होगया ?

विष कन्या—हे महामते ! मैं चित्रग्रीव नामक गन्धर्व की स्त्री हूँ। मेरा नाम सुलोचना है। एक दिन मैं गन्धमादन पर्वत की एक शिला पर बैठी थी। उस समय यक्ष मुनि को देख कर मुझे हँसी आयी। उस समय मैं अभिमान से अन्धी हो रही थी। मैं ऋषि की ओर मुँह करके हँसने लगी। मेरी निरादर से भरी हँसी सुन यक्ष ऋषि ने क्रोधित हो मुझे शाप दिया। उसी शाप से मेरी दृष्टि में विष हो गया है। फिर मैं इस नगरी में डाली गयी और नाग कन्या हुई। मैं दृष्टि द्वारा विष बरसाया करती हूँ। आज मेरा बड़ा भाग्य है कि आपके दर्शन करने से मेरा शाप छूट गया। ऋषिने मुझ पर बड़ी दया की जो शाप दिया;

क्योंकि इस तरह आपके देव दुर्लभ चरणों का दर्शन तो मिला । महात्माओं का क्रोध भी भला होता है । हे देव ! अब मैं अपने पति के पास जाती हूँ ।

इतना कह और भगवान् को प्रणाम कर, वह गन्धर्व नारी अपने पति के पास चली गयी ।

कल्कि जी ने महामति को उस पुरी का राजा बनाया। वहाँ से भगवान् अयोध्या जी गये और वहाँ महाराज मरु का अभिषेक किया ।

फिर वहाँ से वे मथुरा जी गये और वहाँ सूर्यकेतु का अभिषेक किया । वहाँ से हस्तिनापुर जाकर देवापि को वहाँ का राजा बनाया ।

भगवान् ने प्राज्ञ को पौंड्र देश, कार्व को शौम्भ और सुमंत्र को पुलिन्द और मगध देश दिया।

राजा विशाखयूप को कलङ्क और कपाल देश दिये ।

इस तरह बाकी देशों को और लोगों को दे भगवान् सम्भल ग्राम में रहने लगे ।

एक बार फिर से पृथ्वी पर वेदों का मधुर गान सुनायी देने लगा । स्त्रियाँ मङ्गल कार्य करने लगीं । फिर से पूजन होने लगा । एक बार फिर से हवन के धुएँ से वायु सुगन्धित हुई । क्षत्रिय याग यज्ञ में तत्पर हुए । वैश्य विष्णु पूजा में रत रह

कर व्यापार की उन्नति करने लगे। शूद्र नाना प्रकार की वस्तु बनाने और द्विजों की सेवा करने लगे। एक बार फिर से पृथ्वी पर भगवान् विष्णु का कीर्त्तन होने लगा। सालों से दुखी लोग एक बार फिर से सुख की नींद सोने लगे।

देवता गण मनुष्यों को दर्शन देने लगे। शठता, चोरी, झूँठ, धोखा, आधि, व्याधि, रोग आदि दूर होगये। लोग हृष्टपुष्ट हुए। एक बार फिर से, सुजला सुफला शस्यश्यामला भूमि सब तरह के अन्नों से हरी भरी हो गयी।
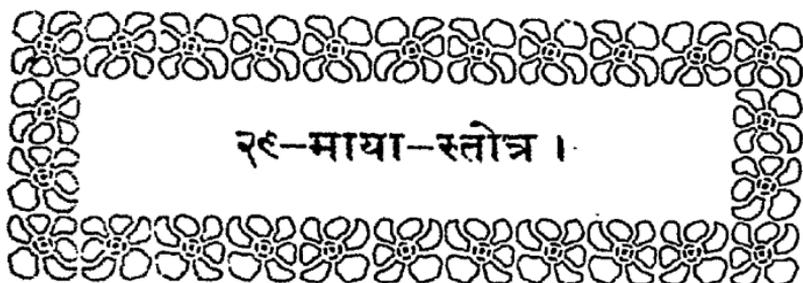
२९—माया—स्तोत्र ।

इतना सुनकर सौनक जी सूत जी से बोलेः—

शौनक जी—सूतजी ! महाराज शशिध्वज मायास्तव करके कहाँ गये ? मायास्तुति क्या है ? यह सब हमें सुनाइये ।

सूतजी—हे मुनि गण ! मार्कण्डेय जी के पूँछने पर शुकदेव जी ने जो मायास्तव कहा था. मैं वही मायास्तव कहता हूँ ।

राजा शरीरध्वज ने संसार से मुक्त होने के लिये माया का स्तोत्र कहना आरम्भ किया ।

"हे माया ! तुम शुद्धरूपिणी, शुद्धसत्व गुणमयी और ब्रह्मा, विष्णु और महादेव जी की माता हो । वेदों में तुम्हारी महिमा गायी गयी है । तुम्हारी कोख में जीव रहता है, देवता गन्धर्व, सिद्ध और विद्याधर गण तुम्हारी वन्दना करते हैं । तुम सूक्ष्म, स्वाहा रूपिणी और ह्रीं बीज रूपिणी हो । मैं तुम्हारी वन्दना करता हूँ ।

"हे माया ! तुम सृष्टि के आदि, मध्य और अन्त में मौजूद हो । पूर्णभाव से उपासना करने पर तुम मिलती हो । तुम्हारे

कारण सारे प्राणी प्रपञ्च में पड़े हैं । तुम ब्रह्म स्वरूपिणी हो, तुम्हें नमस्कार है।

"तुम्हारे प्रभाव से तीनों जगत पञ्चभूतों से प्रकाशमान हैं । तुम्हारे प्रकाश के विना काल, कर्म आदि कुछ भी प्रकाश नहीं होता । तुम्हें नमस्कार है।"

"तुम्हीं भूमि में गन्ध हो, जल में रस हो, तेज में रूप हो पवन में स्पर्श हो, आकाश में शब्द हो, इसी प्रकार तुम्हीं संसार के जीवों में व्याप्त हो । इस लिये तुम विश्वरूपिणी हो । तुम्हें नमस्कार है।"

"तुम्हीं ब्रह्म रूपिणी सावित्री हो, तुम्हीं भूतेश्वरी भवानी हो, तुम्हीं नारायण की लक्ष्मी हो, तुम्हीं इन्द्र की इन्द्रानी हो। हे माया ! तुम इसी प्रकार सारे जगत में व्याप्त हो।"

"तुम वरणीय हो । तुम उपासकों को वर प्रदान करती हो। लोग तुम्हारा सन्मान करते हैं । तुम्हीं चण्डिका, दुर्गा, कालिका आदि होकर समय समय पर अनेक रूप से अनेक देशों में प्रकाशित होती हो।"

"हे देवि ! यदि कोई अपने हृदय में, तुम्हारे चरणों का-जिनको देवताओं ने पूजा है-ध्यान करे, भक्ति सहित भावना करे और तुम्हारा नाम जपे तो उसका कल्याण होता है।"

हे मुनि गण ! यह स्तोत्र राजा शशिध्वज ने कहा था। फिर वे वन में चले गये और वहाँ से वे वैकुण्ठ चले गये।

३०—कल्कि-स्वर्ग-गमन ।

भगवान् कल्कि जी सम्भल ग्राम में आकर रहने लगे । उनके पिता ने कई एक यज्ञ किये । एक बार सारेदेवता और गन्धर्व ऋषि आदि वहाँ आये और भगवान् कल्कि जी से बोलेः—

देवता गण—हे देव ! आपकी जय हो । अब आप पृथ्वी पर सत्ययुग और धर्म की स्थापना कर चुके हैं । अब आप कृपा कर स्वर्ग चलें ।

देवताओं की प्रार्थना सुन, भगवान् कल्कि जी ने स्वर्ग चलने का विचार किया । उन्होंने अपने पुत्रों को राज्य बाँट दिया और उनसे स्वर्ग यात्रा का हाल कहा ।

यह सुन सारी प्रजा बड़ी दुखी हुई । उसने भी स्वर्ग चलने की इच्छा प्रकट की । भगवान् प्रजा को समझा कर अपनी दोनों स्त्रियों को लेकर वन में चले गये ।

फिर जहाँ से गङ्गा जी निकली हैं और जहाँ जाकर ऋषि मुनि प्रसन्न होजाते हैं, वहाँ हिम के शिखर पर भगवान् बैठे ।

एकाएक उनके शरीर से सहस्रों सूर्य के समान प्रभा प्रस्फुटित[1] होने लगी। एकाएक पूर्ण ज्योतिर्मय सान्दि स्वरू सनातन परमात्मा दीप्तिमान होने लगे।

उनका आकार अनेक अलङ्कारों से अलंकृत हो गया। शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म आदि से शोभित हुए।

उनके हृदय में कौस्तुभ मणि शोभा देने लगी। देवतागः उन पर फूल बरसाने लगे। चारों ओर दुन्दुभी बजने लगी।

अपने स्वामी का यह हाल देख कर रमा और पद्मा आ में कूद पड़ीं और परम धाम सिधारीं।

कल्कि जी की आज्ञा से धर्म और सत्ययुग बहुत दिनों त पृथ्वी में रहे।

देवापि और मरु, ये दोनों राजा कल्कि जी की आज्ञा भूमण्डल में राज्य करने लगे।

विशाखयूप राजा यह समाचार सुन अपना राज्य पुत्र व सौंप वन में चले गये।

---

१ निकलने।

३१—कल्कि-पुराण की बड़ाई।

अन्त में सूत जी बोले:—

यह कल्कि पुराण जगत को आनन्द देने वाला है। जो लोग कलिकाल के पापों से पूर्ण हो रहे हैं उनका मन इसके ध्यान पूर्वक सुनने या पढ़ने से नष्ट हो जाता है। यह पुराण सब शास्त्रों का तत्व है।

कल्किपुराण को विधि पूर्वक सुनने से ब्राह्मण को वेद का ज्ञान क्षत्रिय को राज्य, और वैश्य को धन और शूद्र को बड़ाई मिलती है।

इसके सुनने से विद्यार्थी विद्या, पुत्रार्थी पुत्र और धनार्थी धन पाता है।

सब पुराणों के ज्ञाता लोमहर्षण पुत्र, व्यास जी के शिष्य मुनिवर सूत जी को प्रणाम है।

जिन भगवान् कल्कि ने फिर से धर्म को पृथ्वी में बताया, जिन्होंने फिर से वेद मत को पृथ्वी पर चलाया, जिन्होंने अध-

र्मियों का नाश किया और जिन्होंने फिर से सत्ययुग और ध
को स्थापन किया; उन भगवान् कल्कि जी को प्रणाम है ।

जलमय जलद सी देह जिनकी अश्व पर असवार हैं ।
जो सर्व लोकन पाल हैं, अरु कर धरे करवाल हैं ॥
जिन नास कलिकुल को कियो सद्धर्म के रखवार हैं ।
वे कल्कि हरि मङ्गल करैं जो भुवनपति अवतार हैं ॥

Prin'l_ :v PT. KALIKA PRASAD DIKSHIT at the National Press, A